अगिन देवी

(मधुकर सिंह का नया सशक्त उपन्यास)

अग्नि देवी

मधुकर सिंह

भारती प्रकाशन
नई दिल्ली-110016

अगिन देवी

—"फूल क्यारियों में ही नहीं, जंगली झाड़ियों में भी खिल सकते हैं, मगर उन्हें झाड़-झंखाड़, तने-तिनकों में से सिर उठाकर हवा, धूप और आंधी का सामना भी करना पड़ता है ! जंगली फूल के रूप में विकसित हो रही दलित युवती के मानसिक आघातों का सशक्तरेखांकन। जात-पांत के जानलेवा ग्राम्य परिवेश में जड़ सामाजिकता के विविध आयामों की गहरी खोज-पड़ताल।"

—"बाप रे बाप ! दुखिता की छौड़ी गजब की बदचलन है। एक जगह इसका मन भर ही नहीं सकता। उधर बाबू जमुना सिंह पर अंधेरे में हमला कर दिया। इधर उनके लड़के को रात में अपने घर पर बुलाती भी है। एकदम छिनाल है। मुसलमान ममदुआ के गले में रात भर बांह डालकर गंगा के अरार पर पड़ी रहती है सो अलग। धर्म-जाति सबका सत्यानाश कर रही है। कुछ न कुछ उपाय तो करना पड़ेगा—"

—"सुनलो पंचों, गरीब की न कोई जात होती है, न धर्म। ममदू और अगिनदेवी पति-पत्नी हैं। इन्हें गांव से कोई नहीं निकाल सकता। ये जबतक जिन्दा हैं इसी गांव में रहेंगे। आदमी मर जाता है मगर अपनी जन्मभूमि छोड़कर कहीं नहीं जाता। अगिनदेवी मंदिर की तरह पवित्र है। इस देवी के मंदिर की रक्षा के लिये इसी गांव में रहेंगे।"

—"बाप रे बाप ! दुखिता की छौड़ी गजब की बदचलन है। एक जगह इसका मन भर ही नहीं सकता। उधर बाबू जमुना सिंह पर अंधेरे में हमला कर दिया। इधर उनके लड़के को रात में अपने घर पर बुलाती भी है। एकदम छिनाल है। मुसलमान ममदुआ के गले में रात भर बांह डालकर गंगा के अरार पर पड़ी रहती है सो अलग। धर्म-जाति सबका सत्यानाश कर रही है। कुछ न कुछ उपाय तो करना पड़ेगा—"

—"सुनलो पंचों, गरीब की न कोई जात होती है, न धर्म। ममदू और अगिनदेवी पति-पत्नी हैं। इन्हें गांव से कोई नहीं निकाल सकता। ये जबतक जिन्दा हैं इसी गांव में रहेंगे। आदमी मर जाता है मगर अपनी जन्मभूमि छोड़कर कहीं नहीं जाता। अगिनदेवी मंदिर की तरह पवित्र है। इस देवी के मंदिर की रक्षा के लिये इसी गांव में रहेंगे।"

—"जब इन्हीं हाथों से खेत कोड़ते हैं, हल चलाते हैं, पेड़ और फसल उगाते हैं तो जुल्म के हाथ भी तोड़ सकते हैं—"

गंगाजी की लहर सिकुड़ती-सिकुड़ती पेटी में चली जा रही है, जैसे किसी मानुष की परछाईं हो। रेती भड़भूजे की बालू की तरह सावन-भादों में भी तप रही है। हांफती हुई गायें गंगाजी की राहें भूल गयी हैं। मरछिया काकी के कंठ में अब वैसा 'परताप' भी नहीं रह गया है कि एक बार कंठ फोड़ती तो इन्द्रासन भी डोलने लगता और छप्पनो कोट बारिश होती। सिरीटोला में यह कहावत प्रचलित है कि जहां मरछिया काकी के कंठ से यह सुर निकला कि 'जमुना सिंह छोड़स आपन मउगी, गंगा मइया छोड़ ना अरार' वहां गंगाजी की लहरें अचानक खौलने लगतीं, इन्द्र अपना आसन छोड़कर काकी के कंठ में सभा जाते। इसके बाद तो दुनिया में चारों तरफ आनन्द ही आनन्द है। जमुना सिंह की कोठी में अन्न का अपार भंडार हो जाता है। जमुना सिंह भाले में रूमाल बांधकर सम्पूर्ण दियर के इलाके में अपनी शोहरत का डंका पीट आते। मरछिया काकी तो अवतारी महिला हैं, जब मन से चीखती हैं तो बरखा होती है।

आज तो मरछिया काकी का समूचा 'परताप' मटियामेट हो गया है। कल ही रात से हरफरौरी गाते-गाते बेहोश हो गयी है, मगर बादल का एक टुकड़ा भी आकाश में कहीं नहीं है। उन्होंने रात-रात भर खेत में झुंड के झुंड नंग-धडंग हल चलाके देख लिया है। सारा शास्त्र-पुराण, ब्राह्मण, पूजा-परम्परा फेल कर गयी है। मरछिया काकी को कोई कौआ बराबर भी नहीं पूछता है। गंगाजी बनास के नाले की तरह कैसी पतली हो गयी हैं। विश्वास ही नहीं होता कि हर साल दियर में तबाही मचाने

वाली वही गंगाजी हैं। ऊपरी इलाके में छिटपुट अरहर की खेती नजर आ रही है। सिरीटोला के लोगों ने लाचार होकर तीन-चौथाई खेतों में अरहर वो दिया है। हथिया नक्षत्र में हल्की वर्षा जरूर हुई है तभी तो अरहर के पेड़ों में जान आ गयी है।

सिरीटोला गंगाजी की पेटी से ऊपर एक टीले पर उठे हुए मचान की तरह नजर आता है। गनपतटोला वहां से थोड़ी दूर हटकर है। परसों दिन के लगभग ग्यारह-बारह वजे सिरीटोला और गनपतटोला के मजदूरों ने जमुना सिंह की ड्योढ़ी से दो सौ मन गेहूं लूट लिया है। इस सुखाड़ में कहीं काम नहीं है। कई शाम से चूल्हे नहीं जल रहे हैं। परतापी सिंह के कोल्ड स्टोरेज से कुछ ठीक, कुछ सड़े हुए आलू उठाकर दिन गुजार रहे हैं। जमुना सिंह की औरत-बच्चों को वाहर निकाल दिया है और जमुना सिंह के चाभी नहीं देने पर ताला तोड़कर अन्दर घुस गए हैं। पुलिस अठारह हरिजनों को पकड़कर ले गयी है। कुछ दिनों तक तो पुलिस जवर्दस्त हंगामा, मारपीट और तबाही मचाए रही। परन्तु उनके भीतर भी कैसी कठोरता समा गई है कि भूख से मरने की वजाय पुलिस के हाथों मरना ज्यादा उचित लगता है। ममदू को पकड़ने के लिए पुलिस ने उसे खदेड़ा तो अरहर के खेतों में घुसकर वह भी यही चिल्लाया है, "हमसे भूखा रहा नहीं जाता तो हम क्या करें!"

धीरे-धीरे स्थिति सामान्य हो गयी है। जिन्हें पुलिस ले गयी वे या तो जेल में हैं, नहीं तो जवार तजकर 'गुंडाएक्ट' की सजा में जिला से वाहर चले गए हैं। वे अव अपने घर के निजी लोगों को छोड़कर दूसरों को याद भी नहीं हैं। ममदू के पीछे पुलिस वुरी तरह पड़ी हुई है। लोगों का कहना है, ममदू इन्हीं अरहर के खेतों में कहीं छिपकर रहता है। पुलिस एक-एक ईंच छानकर थक गयी है—ममदू फरिश्ते की तरह पकड़ में नहीं आ रहा है। फरीदा अम्मी की दो वकरियां उठाकर थानेदार ले गया है। अम्मी की चीख-चिल्लाहट का कोई असर नहीं है। ममदू भी ऐसी घटना सुनकर प्रकट क्यों नहीं हो रहा है? जवसे यह नया थानेदार आया है, फरीदा की वकरियों

के झुंड में मानो भेड़िया चला आया हो। फरीदा के पास कुल दो ही वकरियां शेष रह गयी हैं। वाकी मुंआ सव आते ही निगल गया है। ममदू कहीं से पर-गट हो तव मुंअे के पेट में हाथ घुसेड़कर सारी वकरियां काढ़ ले। वाप रे! मानुष-धरम, मन्दिर-मस्जिद, सव पी गया है।

जगपत पांडे ठीक चार वजे भोर—ब्राह्म मुहूर्त में गंगाजी के अरार पर स्नान के लिए पहुंच जाते हैं। क्या जाड़ा और क्या वरसात—सालों भर का उनका यही नियम है। उनका तो वस एक ही नारा है, 'राम नाम है धाम। सुनो रे दुनिया से क्या काम!' न ऊधो का लेना, न माधो को देना। खड़ाऊं चटचटाते हुए रोज ब्राह्म मुहूर्त गंगा मैया के चरणों में लोटने के लिए पहुंच जाते हैं। वही जव 'राम नाम' रटते हुए सिरीटोला से होते हुए गनपतटोला लौटते हैं तो सिरीटोला के अधिकांश लोगों की आंखें खुल जाती हैं। देवन, भिखारी जिऊत पांडे जी को घड़ी समझकर रिक्शा निकालते हैं और शहर की ओर निकल जाते हैं। आज गंगाजी से लौटते समय भिखारी उन्हें देखते ही चौंकता है, पांडे वावा की जवान में अचानक ग्रहण कैसे लग गया है? धड़धड़ाकर 'पायलग्गी' करते ही पूछ वैठता है, "आज भगवान के नाम पर सूर्यग्रहण कैसे, वावा? सिरीटोला की भाग्य-किस्मत सही-सलामत है न? या फिर पुलिस की ओर से गरीव लोगों पर कोई कुचक्र है?"

"थानेदार के जुलुम से भी संगीन मामला है।" जगपत पांडे राम-राम की वेला में गला फाड़कर चिल्लाते हैं, "हिन्दू समाज की नाक कट गयी है।"

"क्या हुआ, वावा?" भयभीत भिखारी हाथ जोड़ लेता है।

"गनपतटोला के दुखिता की वेटी अगिनिया चमइन को ममुदवा लेकर भाग गया है।"

"यह सव अचानक कैसे हो गया, वावा! ममदू तो ऐसा आदमी नहीं था।" भिखारी अन्यमनस्क-सा ही वोल जाता है और रिक्शे की सीट को दाहिने हाथ से पकड़कर सड़क की ओर निकल जाता है।

ममदू गनपतटोला और सिरीटोला दोनों गांवों के लोगों में वड़ा

'घरेलू' आदमी है। बीस-इक्कीस साल का मोहम्मद मियां—जिसे लोग प्यार से ममदू कहते हैं—दोनों गांव में किसी भी गलत वात के विरोध में ममदू आगे रहता है। पांडे वावा भी थानेदार की तरह ममदू नाम से कहीं जलते तो नहीं हैं ! ममदू और दुखित को वदनाम कराने के लिए भी तो ऐसा किया जा सकता है। जमुना सिंह के यहां लूट-पाट के दिन भी जगपत वावा थानेदार के कान में कुछ घुसुर-पुसुर कर रहे थे। ममदू वड़ा दिलेर लड़का है। पता नहीं, 'दुनिया' ऐसे युवकों के खिलाफ क्यों खड़ी हो जाती है ?

फरीदा को सारा गांव दीदी कहता है—फरीदा दी। फरीदा दी का पति उनकी जवानी में ही चल वसा था। तभी से यह नैहर में ही रहती है। उसकी अम्मी जव मरीं, तो वेटी फरीदा और नाती ममदू के लिए सम्पत्ति के नाम पर मिट्टी का एक गिरता हुआ घर और वच्चे सहित ग्यारह वकरियां छोड़ गयी हैं। फरीदी दी ने इन्हीं वकरियों के सहारे ममदू को किसी तरह इतना वड़ा कर दिया है। इनका सम्प्रदाय अलग होते हुए भी गनपतटोला में इनके साथ किसी भी तरह का अलगाव नहीं रहा है। खान-पान, उठना-वैठना, पर्व-त्योहार सवमें वे घुल-मिल गए हैं। ममदू जव होली-चैता में ढोलक लेकर वैठ जाता है तव देखते ही वनता है। ममदू को अभी तक नहीं मालूम कि वह हिन्दू है या मुसलमान है। फ़रीदा दी ने भी उसे यह सव समझाने की कोशिश नहीं की है।

भिखारी रास्ते भर सोचकर थक गया है। रिक्शा स्वतः ही कच्ची सड़क पर सरकता चला जा रहा है। पीछे-पीछे जिऊत और देवन के रिक्शे का भी आभास मिल रहा है। भिखारी यह वात नहीं समझ पा रहा है कि वह गनपत पांडे की वातों से डर क्यों गया है। जिऊत और देवन से इस पर वात-विचार के लिए अवकाश भी नहीं है। अव तो शहर पहुंचने के वाद सारा दिन कौन कहां रहेगा, क्या मालूम।

अगर ममदू दुखित की वेटी को मर्यादित ढंग से वहू मानकर रख ही ले तो इसमें किसी की नाक कटने का कहां सवाल है ? लड़की और लड़का

एक ही गांव के भी तो नहीं हैं। दो जातियों में कई शादियां तो भिखारी भी जानता है। खुद जमुना सिंह के बाप का कहीं ब्याह नहीं हो रहा था तो ढलती उमिर में सोनपुर मेले से एक औरत खरीद लाए थे। अगल-बगल कानाफूसी जरूर हुई थी। जमुना सिंह के बाप ने ब्राह्मण बुलाकर ब्याह कर लिया। यही जगपत पांडे ललकार-ललकार कर कहते चलते थे—क्या सबूत है कि बाबू साहब की मेहरारू परजात औरत है ? धीरे-धीरे लोग चुप लगा गये थे। जमुना सिंह उसी मेहरारू की निशानी हैं। परसाल ही तो जमुना सिंह की बड़ी बेटी की अपनी ही जात-बिरादरी के यहां बड़े धूमधाम से शादी हुई है। कहां जमुना सिंह के खून में फर्क पड़ गया है ? ममदू और अगिनिया की दो जातियां हैं तो कौन-सा पहाड़ टूट रहा है ? जो पैदा होने के दिन से ही रोटी के लिए हाथ-पांव मारता आया हो उसे जात-सम्प्रदाय के बारे में सोचने की कहां फुर्सत है !

जगपत पांडे की इसी नीयत पर कभी-कभी बहुत खीझ होती है। गांव-घर में हर साल कोई न कोई बखेड़ा खड़ा करते रहते हैं। माला-कंठी, चन्दन-काठी किस काम के लिए है ? संयोग की बात है, भिखारी जैसे ही अपना रिक्शा रेलवे-गुमटी के सामने से दायीं तरफ स्टेशन की ओर मोड़ता है, वैसे ही सामने दुखित पर नजर पड़ जाती है। हे परमात्मा ! यह कैसा संयोग है ! क्या सचमुच भोर की चिन्ता और भोर का सपना सच होता है ?

भिखारी अचकचाकर रिक्शा रोकता है और उतर जाता है।]

"कहां से दुखी भइया ? समाचार तो ठीक है ?" वह पूछता है।

दुखित उसके करीब में खड़ा हो गया है। "ठीक ही है। तनिक बिटिया की ससुराल चला गया था—मझिआंव। रात की वजह से यहीं मुसाफिर-खाने में टिक गया था। अब उठकर गांव जा रहा हूं।"

"जगपत पांडे कुछ दूसरी ही बात कह रहे थे।"

"कहते होंगे, बबुआ। गरीब आदमी के बारे में तो और भी भयानक-भयानक बात कही जाती हैं।"

"तब किसलिए गए थे ?"

"मझिआंव वालों से साफ-साफ पूछ लेना चाहता था कि अगिनिया के बारे में खुलकर जवाब दें ।"

"तब मझिआंव वाले क्या कहते हैं ?"

"वे अगिनिया को रखने के लिए तैयार नहीं हैं ।"

"क्यों ?"

"उनका कहना है कि अगिनिया बदचलन है। हमारे लड़के पर रहना नहीं चाहती है ।"

भिखारी को सचमुच सुनकर गुस्सा आ रहा है । "हमारी बेटी-बहिन का मुंह अभी इतना नहीं खुला है, दुखी भइया। मझिआंव वाले एकदम मनगढ़न्त बात कर रहे हैं। इसके बाद तुमने कुछ सोचा है ?"

"सोचने से भी क्या होता है, भिखारी बबुआ ? मझिआंव पंचायत में यह मामला डालना चाहता था । मगर सब ससुरे तो वही हैं । चोर-चोर मौसेरे भाई । यह तय कर लिया है कि अगिनिया का कहीं दूसरा घर करा दें । इसके सिवा दूसरा रास्ता क्या है ?"

"ठीक ही सोचा है ।"

"कहीं लड़का-वड़का बताना, भिखारी !"

"जल्दी बताऊंगा, भइया। अपनी इज्जत की बात है । एक लड़का मेरी नजर में है ।"

"कहां, बबुआ ?"

"मझिआंव में ।"

"क्या करता है ?"

"करता क्या है—कोई जज कलक्टर है ? बस हमारी-तुम्हारी तरह मिहनत-मजूरी, और क्या ?"

"एक दिन मेरे लिए समय निकालकर नारायणपुर चलो ।"

"मौका मिला तो आज ही लड़के के बाप से बतिया लेता हूं ।"

"यह कैसे ?" दुखित अचानक घबड़ा जाता है ।

"घवड़ाने की वात नहीं है । वाप चौक के पास सड़क के किनारे जूता मरम्मत करता है । आज ही वतिया लूंगा ।"

दुखित को लगता है, उसके माथे का वोझ अचानक उतर गया हो। "तव गांव पर वातचीत होगी । चल रहा हूं ।"

भिखारी अपना रिक्शा फिर स्टेशन की ओर वढ़ा देता है ।

अगिनिया का भी गजव भाग्य है । जव वह दस साल की थी तभी वावू ने एक वढ़िया लड़का ढूंढ़कर उसका व्याह कर दिया था। मगर किस्मत की वात, अगिनिया के व्याह के अभी दो ही तीन माह नहीं गुजरे थे कि लड़का चेचक की वीमारी में चल वसा था । वेचारी पति का मुंह भी नहीं देख पायी थी। शादी के वाद छोटी जानकर ससुराल वाले भी नहीं ले गए थे। उन्होंने सोच लिया था, लड़की अभी छोटी है । चार-पांच साल वाद गौने में ले जाएंगे । दुखित पर पहाड़ टूट पड़ा था। टोला-पड़ोस के लिए भी अगिनिया तभी से अपशगुन का प्रतीक वन गयी थी । जव कभी कोई नया काम शुरू करने वाला होता, कहीं यात्रा पर निकलता और अगर अगिनिया सामने पड़ गयी तव तो अगिनिया की खैर नहीं। क्या औरत और क्या मर्द—सवके-सव टूट पड़ते, दुखिता घर में रांड़ को वैठाए हुए है। कहीं गर्दन मरोड़ क्यों नहीं देता? हमारी यात्रा खराव होती है। रांड़ी की शक्ल कैसी है—एकदम चुड़ैल की तरह, काली-कलूटी कौआ की तरह। देखो तो मन खराव हो जाय । वाल ऐसे किए रहती है जैसे चिड़िया का खोंता हों। वेचारी अगिनिया सुन-सुनकर परहेज जाती। जव-तव दांत भी किटकिटाती । मगर करती भी क्या? माई-वाप भी तो सुनकर कुछ नहीं करते! माई इतना ही भर जवाव देकर चुप लगा जाती, क्या करें! भगवान् ने वेटी को गौना के पहले रांड़ वना ही दिया तो जान मार दें?

ों लड़का ताक रहे हैं, मिल गया तो हाथ पकड़ा देंगे।
अगिनिया सारा दिन बकरी चराती फिरती। इस बधार से उस बधार
ूमती-फिरती शाम कर देती। खाने-पीने की भी कोई चिन्ता नहीं। जो
ुछ चना-चबैना या रोटी माई देती उसे आंचल के एक कोने में बांध लेती
ओर किरण फूटने के पहले ही बकरी लेकर निकल जाती। रास्ते में या
फिर कहीं आरी-पगार पर फरीदा बुढ़िया मिल गयी तो थोड़ी देर तक
हंसने-बतियाने का मौका मिल जाता। नहीं तो सारा दिन मनहूस और
पागल की तरह दियर के सूनसान तट पर भटकती रहती। जब-तब ममदू
फरीदा बुढ़िया के बदले में या साथ में मिल गया तो आम के पेड़ के नीचे
बाघा-गोटी खेलती रहती। और नहीं होता तो बकरी चरती हुई छोड़कर
गंगाजी के एकदम पास पहुंच जाती और घंटों पानी में पैर डालकर बैठी
रहती, अपने दिवंगत दूल्हे के बारे में या फिर भावी दूल्हे के बारे में कल्पना
करती रहती। उसने एक बार बाघा-गोटी खेलते समय ममदू से पूछ भी
दिया, "अच्छा भइया ममदू, बता तो मैं सचमुच इतनी बदशक्ल हूं?"

"क्या मतलब?"

"मेरा मतलब है मैं बहुत ज्यादा काली और किसी लायक नहीं हूं?"

"मुझे तो तू बहुत अच्छी लगती है।"

"तब काहे सभी मुझ पर नजर पड़ते ही नाक-भौं सिकोड़ने लगते
हैं?"

"कोई किसी को पसन्द करता है, कोई नापसन्द करता है। यह तो
अपनी-अपनी मर्जी है। मुझे तो तुम्हीं सिरीटोला में सबसे अच्छी लगती
हो!"

अगिनिया को ममदू की हर बात से बहुत ज्यादा विश्वास मिल
था।

"मुझसे कौन ब्याह करेगा रे ममदू?"

"बहुत लोग करेंगे।"

अगिनिया खिलखिलाकर हंस पड़ती। "ये बहुत लोग कौन हैं

सिरीटोला का तो कोई भी नहीं होगा।"

"गनपतटोला में कौन है रे?"

"एक तो मैं ही हूं।"

अगिनिया खिलखिलाकर हँस पड़ी, जैसे गंगा की लहरों से जलतरंग स्वयं वज उठा हो।

"एक वात और पूछती हूं, वताओ।"

"पूछ ना?"

"तुम्हारे यहां भी कोई रांड़ से व्याह कर लेता है?"

"यह तो मैं अम्मी से पूछकर वताऊंगा।"

"मुझे एक तकलीफ यह है ममदू, कि माई-वावू भी चुप लगा जाते हैं, कुछ नहीं करते।"

"क्या मतलव?" ममदू चौंक गया।

"घर के लोग भी मुझे मनहूस या अपशगुन समझते हैं।"

"ऐसा नहीं हो सकता।"

"तव माई-वावू उन्हें मना क्यों नहीं करते? क्यों वर्दाश्त कर लेते हैं?"

"क्या चाहती हो, सवसे लड़ाई कर लें?"

"तव और क्या? यह वर्दाश्त करने की आदत मुझे एकदम अच्छी नहीं लगती। अव से जो भी मुझे ऐसा कहेगा उसे गालियां दूंगी या ईंट उठाकर मार दूंगी।"

ममदू कुछ नहीं वोलता।

टोला-पड़ोस के लोग अगिनिया में इस परिवर्तन से और भी भड़क उठे। वे तो दुखित को यहां तक सलाह देने लगे, "वेटी को कहीं व्याह दो या तो गंगाजी में डुवा दो। टोला-पड़ोस में इस रांड़ के चलते जीना मुश्किल हो गया है।"

माई-वाप सुनकर और भी दुःखी होते। मगर अगिनिया भीतर-भीतर 'लड़ाई' की पूरी तैयारी करने लगती। भला कहो तो, मैं अपने सवांग को

मारने के लिए गयी थी ? चेचक की बीमारी में मर गया तो भगवान से पूछो ना ? मैं उसे मारने के लिए कहने गई थी ? मैं तो उसके मरने की खबर पाते ही महीनों रोती रह गई थी। मेरे हाथ में होता तो भगवान के यहां से उसे छीन लाती। कोई मुझे भगवान के घर का रास्ता बतलाने वाला भी तो नहीं है। रास्ता मालूम रहता तो टोला-पड़ोस को अपनी ताकत दिखला देती। भगवान होंगे तो अपने घर के। अगिनिया से अभी पल्ला नहीं पड़ा है। सवांग छीनकर नहीं लाती ममदू, तो इस गंगिया माई की कसम उसी समय इसमें छलांग लगा जाऊंगी।

वह माई से बोली, "माई रे, डर लगता है तो मुझ से बोल ना। मनहूस और रांड़ कहने वाले की जीभ खींच लेती हूं।"

माई अगिनिया को उल्टे मार बैठती।

अगिनिया का मन अरार पर, बधार में कहीं नहीं लगता।

उसके इसी बचपन में एक छोटी-सी घटना घट गयी है। घटनाएं तो बराबर घटती रहती हैं। बिना घटना के जिन्दगी नाम ही कहां है ! घटनाएं अपने आप में न बड़ी होती हैं, न छोटी होती हैं। कोई छोटी-सी ही बात, एक मामूली लग जाने वाली घटना कभी-कभी जिन्दगी में बहुत बड़ी बात बन जाती है। अगिनिया के जीवन में रोज-रोज घटने वाली छोटी-बड़ी घटनाओं में ही यह एक बचपन के दिनों की घटना है। अगिनिया की बकरी का एक बच्चा उछलता हुआ जमुना सिंह के मक्के के खेत में उतर गया था। जमुना सिंह ने दूर से ही देख लिया, अगिनिया चमइन अरार पर पानी में टांग लटका कर बैठी हुई है, और इधर बकरी की कोई खोज-खबर नहीं। बाप का खेत समझ लिया है। वह दौड़ता हुआ गया और बच्चे की एक टांग पकड़ कर जमीन पर इतने जोर से दे मारा कि बच्चा मिमिया भी नहीं सका—जैसे गिरा था वैसे ही गिरा रह गया। जब जमुना सिंह फटाफट गालियां बकता हुआ पूरे बधार को माथे पर उठा लिया तो अगिनिया चौंकी और टांगें मोड़कर झटके से दौड़ पड़ी।

बच्चा तो मुर्दा पड़ा था। अगिनिया ने डबडबा कर बच्चे को गोद में

उठा लिया। जमुना सिंह गिद्ध की तरह चेहरा फैलाकर उसे फिर गलियाने लगा, "काहे रे चमइन, बोलती काहे नहीं ?"

"मेरा नाम चमइन नहीं, अगिन देवी है।" टप-टप कई बूंद उसकी आंख से जमीन पर चू पड़े ।

जमुना सिंह ने जमीन से एक कच्ची बांस की छड़ी उठाकर बिना मोह-माया के तड़तड़ चलाना शुरू कर दिया। अगिनिया जमीन पर छटपटा-छटपटाकर लोट रही थी। पीठ पर तीन छड़ी के मोटे-मोटे दाग उखड़ गए थे। खून से कपड़े रंग गए थे। दुखित को पता चला तो बेटी को उठा ले गया। अगिनिया रात भर बेहोश रही। जमुना सिंह के दरवाजे पर किसी को उलाहना देने की हिम्मत नहीं हुई। टोले भर का गुस्सा टोले के भीतर ही बुझ गया।

अगिनिया की पीठ का घाव लगभग डेढ़-दो महीने बाद ठीक हुआ था। मगर पीठ के तीनो दाग ज्यों के त्यों रह गए थे। इस बीच छोटी लड़की अगिनिया ने पता नहीं किस बूते पर कसम खायी है—जमुना सिंह से बदला लेगी। अगर जमुना सिंह की पीठ पर भी इसी तरह के तीन दाग नहीं उखाड़े तो दुखित चमार की असल बेटी नहीं। परन्तु माई-बाबू के प्रति पहली बार नफरत पैदा हुई।

आम के नीचे बाघा-गोटी खेलते समय ममदू को जब उसने अपनी बात बतायी तो वह अगिनिया को चकित होकर ताकता रह गया। "दुखी चाचा उस कसाई के दरवाजे पर उलाहना देने के लिए भी नहीं गए न ?"

"वे तो मुझे ही डांटने लगे कि मालिक के खेत में बकरी क्यों ले गयी? शायद मैं बेहोश नहीं रहती तो माई भी मुझे इसके लिए बहुत मारती।"

"मैं तुम्हारी मदद करूंगा अगिन !"

"कैसे मेरी मदद करेगा रे, ममदू ? मुझे चिढ़ा तो नहीं रहा है ?"

"नहीं रे अगिन, मेरे सभी साथी तुम्हारी मदद करेंगे।"

"मैं तो रांड़ हूं ममदू। वे मुझसे घिन तो नहीं करेंगे ?"

"वे टोले-पड़ोस वालों की तरह सयाने थोड़े हैं कि तुमसे घिन करेंगे।"

रात में जब भी उसे पीठ की मार याद आती अगिन बेचैनी में रात
ारती । इससे भी अधिक बेचैनी उसे इस बात के लिए होती कि आखिर
ाई-बाबू ने यह कैसे बर्दाश्त कर लिया ? अगर मर गयी होती तब भी
या चुपचाप गंगाजी के अरार पर ले जाकर जला देते ?

एक दिन रात में अगिन आंगन में ही सोयी हुई थी और बाबू माई
से कह रहे थे, "अगिनिया के लिए लड़का देख लिया है।"

"कहाँ ?"

"मझिआंव में एक लड़का है। गांव पर ही एक बाबू का हरवाह है।
रोज-रोज का बन मिल जाता है। यही है कि लड़का तनिक उमिर में कड़ा
पड़ता है।"

"एकदम बूढ़ा तो नहीं है ?" माई की अचानक लौटी हुई खुशी फिर
लुप्त हो गई।

"धत् !" दुखित उसे समझाता है, "लड़का चालिस के नीचे ही है।"

"अपनी अगिनिया तो अभी सोलह बरिस की भी नहीं हुई है।"

"लड़की में बाढ़ बहुत होती है। उसे सयानी होने में क्या देर लगेगी ?"

अगिनिया मन ही मन बुझ गयी, बाबू उसे जान-बूझकर गड़हे में
धंसा रहे हैं। लेकिन उमिरदार ही है तो क्या हो जायेगा। मनहूस, रांड़
आदि तरह-तरह की लांछनाओं से तो बचेगी !

"तुम्हारी लड़की भी कम झगड़ालू नहीं है।" दुखित बोला।

"मझिआंव जायेगी तभी सारी हेंकड़ी घुसड़ जाएगी।" माई ने
बाबू की बातों को सह दिया।

"हम इसे सिरीटोला कभी नहीं बोलाएंगे।"

"बेटी है तो काहे नहीं बोलाएंगे ?"

"ऐसी बेटी सामने से हट जाय यही अच्छा है।"

"क्या किया है बेटी ने, जो इस तरह बोल रहे हो ?"

लगा कि माई-बाबू आपस में लड़ जाएंगे।

"जमुना सिंह ने पटक-पटक कर मारा। इस चुड़ैल ने कुछ क

तभी न मारा होगा ?"

बाबू के वहां से उठते ही अगिन पड़ी-पड़ी रोती रही। माई को सिसकियां सुनाई पड़ीं तो झकझोर कर कहने लगी, "काहे रे अगिनिया, पीठ फिर दरद करने लगा क्या ?"

"पीठ दरद करे चाहे जान चली जाय, तुम्हारे लिए भी तो रांड़ ही हूं रे माई।" अगिन और भी जोर से फफक पड़ी।

मतारी आखिर मतारी होती है। गरीबिन का दिल तो इतना कमजोर है कि ज्वार उठने लगा तो थमने का नाम ही नहीं लेता। माई भोकार पार कर रोने लगी। अलग-बगल से पड़ोसिनें रुलाई सुनकर चली आयीं। अचानक क्या हो गया दुखित बहू को ? रोने काहे लगी है ?

"क्या बताऊं रे बहिनी ? मेरा सवांग अगिनिया के लिए कुआं खोद आया है। तीन दिनों से लड़का खोजने गया था। मझिआंव में एक बूढ़ा से ठीक कर आया है।" वह रोती हुई पूरी बात कह गई।

अगिन उठकर घर में चली गई थी। पड़ोसिनों ने समझा-बुझाकर किसी तरह उसकी मतारी को चुप कराया था।

उसी दिन से अगिनिया के दिमाग में रह-रहकर भारी बवंडर उठता रहता था। उसी उम्र में बड़ी-बूढ़ियों की तरह सोचने लगी थी। दिमाग में रह-रहकर यह भी बात आती—अगिन माई-बाबू को भी त्याग कर कहीं अलग चली जाय। मगर ऐसा तो कहीं देखा-सुना नहीं आज तक, कि मतारी-बाप से बेटी अलग रहती हो। माई-बेटा के बारे में तो वह जानती है, परन्तु बेटी जाति के बारे में तो ऐसा कहीं नहीं सुना है। इसी बीच अगहन का महीना पहुंच गया। हर साल इधर से सैकड़ों लोग कटनी के लिए दक्खिन जाते हैं। गंगाजी के तट पर गेहूं, चना, तेलहन, मटर, खेसारी, जौ आदि फसलें ही होती हैं। कहीं अगर बाढ़ आ गई तब तो मक्का और अरहर भी साफ हो जाता है और रब्बी की उम्मीद भी जाती रहती है। मगर मजदूर तबके के लोग किसी भी हालत में अगहनी फसलों के मौसम में दक्खिन कटनी करने जाने के लिए विवश हैं। कम से कम चार-छः महीने के लिए

तो आहार अवश्य ही जुट जाता है। हर गांव से पन्द्रह-वीस औरतें एक झुंड वनाकर रात में गाँव को सोया छोड़कर निकलती हैं और फिर रात में ही कटनी के वाद गांव के सोने के वाद ही लौटती हैं। अधिकांश तो दक्खिन में ही रह जाती हैं। कोई न कोई धनी, जमींदार या मालिक अपने स्वार्थ के लिए उन्हें दरवाजे पर आश्रय दे देता है। उन्हें विना किसी चिन्ता-झंझट के झुंड के झुंड मजदूरिनें मिल जाती हैं। इससे भी नहीं हुआ तो तमाम मजदूरिनें गांव के वगीचे में एकाध महीने के लिए पड़ाव डाल देती हैं। मजदूरी के रूप में इन्हें इक्कीस वोझ काटने के वाद एक वोझ मिल जाता है। इस प्रकार सारा दिन तो वे कटनी करती हैं और रात में अपनी मजदूरी के अनाज को पुआल से अलग कर किसी गट्ठर या वोरे में इकट्ठा करती जाती हैं। और कटनी का मौसम समाप्त होते ही अपने-अपने गांव लौट आती हैं।

सिरीटोला के पड़ोसिनों के साथ अगिनिया माई-वेटी भी दक्खिन में नहरी इलाके के एक गांव धरमपुर एक महीने के लिए चली गयीं। वावू का कहना था कि फागुन चढ़ते ही अगिनिया का हाथ मझिआंव वाले को पकड़ा देंगे। माथे से इस पहाड़ के सरक जाने के वाद कोई चिन्ता-फिकिर नहीं रहेगी।

अगिन पहली वार माई के साथ कटनी में धरमपुर आई है। कटनी में तो पहले भी एक-दो साल आई है। मगर इस गांव में नहीं, पियनियां में।

धरमपुर में एक दुर्घटना हो गई।

सभी मजदूरिनों को एक साथ महीने भर के लिए किसी के दरवाजे पर जगह नहीं मिली। इसलिए सभी वगीचे में आ गई। एक रात को जव सभी सो रहे थे तो गनपतटोला के धरीछन की विटिया कवूतरी को कुछ लोग जवरन टांग कर चल दिए। दो दिनों तक धरीछन-वहू कटनी में नहीं गई और वगीचे में छाती पीट-पीटकर रोती रही। एक-दो लोगों ने अगल-वगल अता-पता किया, मगर कवूतरी का कहीं पता नहीं चला। तीसरे दिन धरीछन वहू गनपतटोला लौट आई।

धरमपुरा के बाबुओं पर इस घटना की कोई प्रतिक्रिया नहीं थी। जिस बाबू की धरीछन वह बनिहार थी वह तो इस घटना से इस तरह निरामिष था, जैसे खेल-खेल में किसी बच्चे के हाथ से खिलौना गुम हो जाता हो।

अगिन ने देखा कि माई धान को पीट-पाट करने के बाद भी बैठी हुई है। "काहे रे माई, आज रात को सोएगी नहीं क्या ?"

"सोऊंगी, बचिया। तू सो ना ?"

"तुझे नींद नहीं आती क्या माई ?" उसने अंधेरे में उठकर अनुमान किया, बगीचे में एक-एक पेड़ के नीचे आश्रय पाती मजदूरिनें जाग रही हैं। क्यों ? कबूतरी की चिन्ता में या सारी-की-सारी उसी तरह की फिर किसी घटना से आतंकित हैं ?

अगिन बनावटी हंसी हंसती है। 'मेरी फिकर मत कर, माई।'

"काहे नहीं करूं रे !" माई ने डांटा, "जुग-जमाना देख नहीं रही, गरीब आदमी के लिए एकदम नहीं रह गया है !"

"मुझे कौन चाहेगा, माई ! काली-कलूटी लड़की पर किसी की नीयत खराब नहीं होती। चुपचाप सो जा।"

माई को खींचकर सुला दिया और स्वयं पड़ी-पड़ी विहान तक जागती रह गई। क्या धरमपुर के बाबू लोग नहीं जानते कि कबूतरी को खींचकर ले जाने वाले कौन पापी हैं ? वह इस अपमान से ऐसे छटपटायी, जैसे यह घटना इसी के साथ घटी हो।

इस जुलुम को बर्दाश्त करने वाली जिन्दगी पर लानत है !

अगिन कटनी में रोज कबूतरी का जिक्र करती और इधर-उधर गलियाती रहती। माई बीच-बीच में उसे डांट भी देती थी।

"अच्छा, तो मैं तुम लोगों से एक बात पूछती हूं। बताओगी ?" वह हाथ में हंसुआ लेकर खड़ी हो गई।

"चुपचाप कटनी करने दे रे अगिनिया। हम जितना काटेंगे हमें बन उतना ही ज्यादा मिलेगा।" एक दूसरी औरत खीझकर बोली।

"मेरी बात ध्यान से सुन, काकी।" अगिन तब भी नहीं मानी, "हम

सभी के हाथ में हंसुआ है न ? जैसे हम धान के डंठल काट रहे हैं वैसे क्या जुलुम की गर्दन नहीं काट सकते ?"

सभी उसे एक साथ गाली-बात कहने लगीं। अपनी माई ने तो उठकर एक तमाचा गाल पर चला ही दिया। जी में आता है, यही हंसुआ उठाकर माई के हाथ पर मार दे। कैसी मतारी है ! ऐसी तो सौतेली भी नहीं करती। बात-बात पर मारती रहती है। माई खिसियाकर फिर बोली, "सुन रे, अगिनिया ! बेटी जात को ऐसा निर्लज नहीं होना चाहिए। रमवा बहू, इस बेटी से तो ऊब हो गई है। रह-रहकर अनाप-सनाप बकती रहती है। माई नहीं होती तो अभी किसी कुएं में धसोड़ देती ?"

"अभी से क्या हो गया है, माई ! कुएं में धसोड़ क्यों नहीं देती ?" अगिनिया रोने लगी।

"जा, तू यहां से ! मेरे साथ कटनी मत कर। किसी और का खेत ढूंढ़ ले, नहीं तो हंसुआ चलाकर सचमुच में मार दूंगी ?" माई खड़ी हो गई।

थोड़ी देर में ऐसा लगा कि मतारी-बेटी में महाभारत ठन के रहेगा। माई तावड़तोड़ उसे मारने लगी थी और अगिन से बर्दाश्त नहीं हुआ तो माई को धान की पथारी पर धसोड़ दिया।

इस बार माई जोर से रोने लगी।

दूसरी-दूसरी औरतों ने उसे समझाया, "चुप रह रे, दुखी बहू, चुप रह। रांड़ बेटी ऐसी ही मनचढ़ी होती है। बेटी है तो बर्दाश्त करना ही पड़ेगा।"

"कबूतरी की तरह जरा देखने-सुनने में रहती तो यह खुद किसी को लेकर लापता हो जाती। मगर डायिन है, एकदम काली-कलूटी ! पूछता ही कौन है इसे ? तभी तो ऐसी सती-सावित्री बन रही है। और कबूतरी की बराबर चर्चा कर मन की आग ठंडा रही है। जा रे, अगिनिया ! मतारी का जब एक करम नहीं छोड़ा तब तू किसे छोड़ेगी ? आग लग जाए तेरी जवानी में रे, छिनाल !" माई इसी तरफ बहुत देर तक गलियाती रह गई। अगिनिया भी उठकर आरी पर चली आई थी।

उस दिन रात भर माई-वेटी में कोई वातचीत नहीं हुई। न माई ने चूल्हा जलाया, न वेटी ने। दोनों अलग-अलग सोयीं।

भोर में माई उठकर देखती है, अगिनिया एक पेड़ के नीचे अकेली पड़ी है, अभी तक भैंस की तरह निढाल है। वाप रे! वेटी जात को भला इस तरह निर्भीक होना चाहिए? कवूतरी की तरह वावुओं के गुंडे इसे भी उठाकर चल दें तो क्या विगाड़ देगी दुखी वहू उनका? अच्छा है, मझिआंव वाले इसकी गर्मी ठंडा करेंगे। लेकिन यह लड़की तो ऐसी है कि अपने भतार का भी कोई मोल नहीं रखेगी। मेरे दरवाजे से ऐसी वेटी जितनी जल्दी चली जाय उतनी ही अच्छी है। उसने अगिनिया को पैरों से ठेलते हुए जगाया, "उठ रे रांड़ी, उठ! जवानों ने पता नहीं रात तुम्हें कैसे छोड़ दिया। उठाकर चल देते तव न मजा आ जाता?"

आंगन आंख मलती हुई उठ गई, "मुझे कौन उठाकर ले जाएगा, माई। वे तो जव चाहते हैं गोरी-सुन्दर लड़कियां उन्हें मिल जाती हैं। मुझे कौन पूछता है।" उसने खड़ी होकर जोर से अंगड़ाई ली।

"आंख खोलकर सुन ले अगिनिया", मतारी पैर पटकती हुई खीझ में चल पड़ी—"जवानी में सुअरिया भी सुन्दर लगती है। तुम्हें कोई उठा ले तव तो मुझे संतोष ही हो जाय। माथे का भारी वोझ ही उतर जाय।"

मतारी-वेटी का तनाव कई दिनों तक जारी रहा। सिरीटोला लौटने के वाद भी कई दिनों तक तनाव वना रह गया। ममदू से वह एक रात एकांत में वोली, "मैं क्या करूं ममदू, वावू मुझे मझिआंव के किसी वूढ़े के गले में डाल रहे हैं। उसे जरूर दो-चार वच्चे होंगे।"

"क्या कर ही सकती है, अगिन तू। हमारे घर-परिवार का यही रिवाज है तो अनवोलते जानवर की तरह दूसरे के खूंटे पर जाना ही पड़ेगा। सुना है कहीं, माई-वावू ने वेटी को जिसके साथ लगा दिया उसके साथ जाने से कभी इंकार किया है? वेटी जात गऊ होती है, गऊ रे!"

अगिन आंखें फाड़-फाड़कर ममदू की वात सुन रही थी। इस ममदू को सारा गांव थूकता है—यह साला ममदुआ मियां की औलाद हरामी

नम्बर वन है। इतना झगड़ालू है कि किसी भी दिन इसकी जान जा सकती है। फरीदा दी तो चिल्लाते-चिल्लाते गला सुखा लेती है, मगर मुंआ सुनता कहां है? रात-दिन किशोर लड़कों का झुंड बनाकर आवारागर्दी करता फिरता है। किसी के वगीचे से आम तो किसी की फुलवाड़ी से अमरूद, और नहीं हुआ तो सारा दिन वधार में लड़कों के साथ छेमी-कचरी नोंच-चोंथ करता फिरता है। इसकी लुच्चई का आलम यह है कि वह जमुना सिंह हों, चाहे कोई भी जवार-पथार का आदमी हो, अपनी आवारागर्दी के सामने सवको ठेंगा दिखलाता है। कई वार वड़ों का हुकुम हुआ है—फरीदा वूढ़ी अपनी आवारा वकरियां और वेटा लेकर गांव छोड़ दे। सिरीपुर और गनपतटोला, दोनों गांव तुम लोगों से परेशान है। कई वार तो जगपत वावा के गंगाजी से स्नान कर लौटते समय अंधेरे में उनके वदन से सट गया है। दोवारा उन्हें जाड़े में भी गंगाजी में डुवकी लगानी पड़ी है। ममदुआ को गलियाते हुए मुंह को पानी के कुल्ले से ऊंगली कोंच-कोंचकर पवित्र करना पड़ा है। इतना तक वर्दाश्त कर गए हैं जगपत वावा और जवार-पथार के लोग। साले 'जोलह लूट' का जमाना भूल गए हैं? उस समय तो फरीदवा भी छोटी ही होगी।

प्राय: हर आदमी की आंख का कांटा है ममदू। मगर अभी तक राम जानें गांव में कैसे वचता जा रहा है। खैरियत यही है कि दो-चार जमुना सिंह गांव में नहीं हुए हैं। सभी की आंखों की किरकिरी ममदू कभी-कभार वड़े-वुजुर्गों की तरह वातें कर अगिनिया को ही नहीं औरों को भी चौंका देता है। आज की वात से वह फिर चौंकी थी। कौन कहता है कि ममदुआ आवारा है? ममदू से तो अच्छा दोनों गांव में आदमी नहीं है। गुलाम का नाती जमुना सिंह ममदू को अगिन की वकरी तो नहीं समझ रहा है कि जव चाहा हजम कर लिया। ममदू उसका पेट फाड़कर वाहर न निकल गया तो अगिनिया चमइन नाम नहीं। वह वोली, "तू इतनी अच्छी वातें करता है, ममदू! पुरखे-पुरनियों की तरह। कितनी अच्छी वातें वोलता है तू! गांव वाले तुम्हें नाहक गलियाते रहते हैं।"

ममदू हंसने लगा, "गांव मुझे इतना प्यार करता है कि दूसरे इसके लिए तरसते हैं।"

"यह कैसे रे?" अगिन और भी अचरज में डूब जाती है।

"मेरे जैसा निखट्टू, आवारा, वदचलन गनपतटोला में टिका कैसे रह गया है? जुलाहा आदमी नहीं होता क्या रे? अगर होता है तो मैं भी हूं। ब्राह्मण, जुलाहा, धुनिया यह सब तू समझती है कुछ?"

"नहीं रे!" इन्कार में अगिनिया हाथ-पांव तक हिलाने लगती है।

"तब मैं क्या समझूंगा। मुझे इतना ही लगता है कि इस गंगाजी के अरार से अलग मैं जी नहीं सकता। गंगाजी भी तो हमारी एक मतारी हैं न, अगिन? सारे दियर को अपनी अंचरा में अपना दूध पिला-पिलाकर पालती है। फिर मैं जुलाहा और तू चमइन कहां से रे?"

ऐसे समय में युवक ममदू का चेहरा तमतमा उठता था और आंखें गंगाजी से भी गाढ़ी दीखने लगती थीं, जैसे भीतर-भीतर ही कोई तूफान तड़फड़ा रहा हो। ममदू को जब-तब गुस्सैल देखती तो अगिन को पता नहीं कैसे जमुना सिंह की मार याद पड़ जाती और वह छटपटाने लगती। गुस्सा नहीं हो तो आदमी भीतर ही भीतर तड़पकर प्राण छोड़ दे। ममदू गुस्से में चुप्पी मार लेता है और अगिन इसके ठीक विपरीत मनोदशा में हो जाती है।

"ममदू तू गुस्सा मत पीया कर। तुझे बार-बार समझाती हूं। गुस्सा-मार आदत अच्छी नहीं होती।" अगिनिया बोली।

"तब क्या करूं रे? दो-चार लोगों को मैं अच्छा नहीं लगता तो क्या करूं? तुम्हीं ने जमुना सिंह का क्या बिगाड़ लिया है?"

अगिन चौंकी। ममदू सचमुच कहीं चिढ़ा तो नहीं रहा है?

"तू मुझे ललकारता है, यही न?" तवे की तरह गरम हो गयी अगिन। "उस पपिया से बदला न लिया तो असल चमार की बूंद नहीं।"

"तू तो दो-चार दिन में ही मझिआंव की बहू बनकर चली जाएगी। अपने बुढ़ऊ को जरा तैयार करना।"

पता नहीं क्यों ममदू की इस वात पर अगिन को रोना आ गया। फूट-फूटकर रोने लगी। ममदू घवड़ाया। कहां से कहां मजाक में यह वात मुंह से निकल आयी। यह लड़की तो एकदम कुम्हार की मिट्टी है। चाक पर घूमी नहीं कि टूट गयी। कैसी कमजोर है! मजाक के अक्षर भी नहीं वूझती।

पुरवैया लल्कारती हुई वह रही थी, आसमान में मेघ फैलते जा रहे थे। गंगाजी में हिलकोरे उठ रहे थे। अगिनिया की मतारी को हर साल की तरह आशंका खाने लगी थी, गंगिया माई इस साल फिर दियर को वहा ले जाएंगी। करम को दोनों हाथ से पीट-पीटकर अगिनिया की मतारी सवसे कहती फिरती, "अगिनिया वेटी नहीं सौतिन है। हम लोगों की वर्वादी के लिए जन्मी है। वड़ी मुश्किल से लड़का मिला तो गंगिया माई उफना गयीं। परसाल की तरह फिर दियर का अन्न-पानी अंचरा में समेटकर ले जाएंगी। वावू लोगों की ड्योढ़ी में अनाज नहीं रहेगा तो करमजली का व्याह कैसे करेंगे? राम जानें, इसके करम में कितने भतार हैं।"

वेचारी अगिन की हालत तो वहुत जल्दी ठंडा और वहुत जल्दी गरम होने वाली तवे की तरह है। रोती है तो रात भर रोती रह जाती है। नहीं तो पगली की तरह रात भर ठुनकती रहती है। दुखित समझता है, विटिया भरम गयी है—कावू से वाहर होती जा रही है। वेटी और गरीव के लिए मुंहफट होना भारी अपशगुन है। एक दिन ममदू के मुंह से भी यही वात निकल गयी थी, "दुखी काका, गरीव आदमी तनिक जुलुम के खिलाफ तनने लगा है। इसीलिए उसके ऊपर आफत भी वढ़ गयी है। मुझे तो महभारत-कुरान पढ़ने आता नहीं है मगर उसमें भी जरूर लिखा हुआ होगा कि जुलुम मत वर्दाश्त करो।" कुछ लोग ममदू की ऐसी वातों से चिढ़ते भी थे। खासतौर से जगपत वावा के वर्दाश्त के वाहर है। ममदू ने भी दूसरों की देखादेखी जगपत वावा की पायलगी कह दी थी। वे कहीं पूजा-पाठ से लौट रहे थे या जा रहे थे। वे ममदू को पूजा का विघ्न समझकर

ठंडा हो गए थे। तभी से ममदू उन्हें कानी आंख भी पसन्द नहीं आता। उसके बारे में तरह-तरह से हल्ला मचाते रहते हैं। गांवों में तो खेतिहर मजदूर साल में छः महीने निठल्ले बैठकर या अपने-अपने पेट पर लात मारकर जिन्दगी गुज़ारते हैं। साल भर के लिए मजूरी दो-तीन प्रतिशत से अधिक नहीं है। जो लोग मजूरी में हैं भी उन्हें सालों भर जोखिम भरी जिन्दगी गुजारनी पड़ती है। कब कैसी आफत आ जाय, किसी को भी मालूम नहीं है। बर्दाश्त करते रहने की आदत अगर हो तब तो निर्वाह होता जा सकता है। मजूरी के नाम पर जो भी बन, मान, अपमान मिले उसे सह लो तब तो दुनिया ठीक है, सहज और धार्मिक भावना से शुद्धता के पथ पर चली जा रही है। इस दुनिया में उलट-पलट तभी आती हैं जब कोई मजूर मान-अपमान या कम-बेशी मजदूरी का एहसास करता है। इनके अलावे तमाम निठल्ले काहिल, बदमाश, चोर, उचक्के, डकैत, हरामखोर—यानी दुनिया के सबसे बुरे लोग होते हैं। इनकी गणना धर्म, आदमी या जाति में बहुत कम की जाती है। ये निठल्ले और बेरोजगार लोग गांवों के सबसे बड़े बदमाश लोग हैं। इनकी संख्या असंख्य होती जा रही है। ये छोटी-मोटी बदमाशी बराबर करते रहते हैं। गांव में ये न रहें तो फिर गांवों की दुनिया एकदम शान्त और शाश्वत चल सकती है। मगर ये न रहें तो फिर गांवों में बाज और चील की तरह मुट्ठी भर लोग रहकर किसे अपना आहार बनाएंगे? ममदू भी इन असंख्य लोगों में से एक है और जगपत पांडे की दृष्टि में गाँव के लिए भीषण अभिशाप हैं। एक न एक दिन गांव में महाभारत जरूर रचाएगा। जगपत पांडे की जब-तब ऐसी भविष्यवाणियों से गांव में भूचाल से कम असर नहीं होता। पांडे जी के मुंह से आश्चर्यजनक बातें सुन-सुनकर लोगों को काठ मार जाता है। मगर वे धर्म-वाणियां समझकर सहते जा रहे हैं। नहीं सहन कर पाने वाला आदमी विधर्मी बन जाता है।

दुखित के सामने एक ही प्रश्न बराबर दिमाग में भूचाल पैदा करता रहता है, अगिनिया जल्द से जल्द अपने दरवाजे से दूसरे के खूंटे पर लग

तभी अपने सिर का वोझ भी हल्का हो। करमजली अगिनिया से पिंड
ने का भी दूसरा रास्ता क्या है ? मुहल्ले-टोले के लोग भी वरावर ताने
ते ही रहते हैं, ऐसी शोख वेटी को जल्दी दरवाजे से हटाओ दुखित, इसी
तुम्हारा या टोले-पड़ोस का भी कल्याण है। वेचारा दुखित क्या करे ?
धवा अगिनिया का व्याह मझिआंव में ठीक ही कर आया है। अव क्या
रे ? गनपतटोला के जगपत वावा अगर इजाजत दें तो वह विना किसी
लगन या सुदिन के भी वेटी को व्याहने के लिए तैयार है। फागुन में अव
कितने दिन शेष रह ही गए हैं। मुश्किल से एक महीना। इस एक ही महीने
के लिए वेटी क्यों जंजाल सावित हो रही है ? लोगों का शुद्ध मन से यही
विचार हो तो दुखित अगिनिया की गर्दन दवाकर गंगाजी में प्रवाहित करने
के लिए भी तैयार है।

वसंत पंचमी से ठीक दस दिन अगिनिया के व्याह के दिन शेष रह गए थे।
अगिन का घर से निकलना कम हो गया था। खाली सिन्दूरदान का
रस्म करना था, फिर भी उसे गांव से अलगाव वड़े जोर से साल रहा था
ममदू तो लगातार मन में गंगाजी की तरह हिलकोरे उठाता रहता था
अगिनिया को यही होता कि दौड़कर ममदू के पांव पकड़ ले—तू ही मे
असली देवता है। चल, जहां इच्छा हो। सिरीटोला से जितनी भी दूर
चलना हो मुझे ले चल। इस गांव के वन्धन-डोर को अंगेज नहीं पा
हूं। और कहीं जगह नहीं मिले तो चल, गंगाजी की रेती पर ही हम
का एक सुन्दर घर वनाएंगे। गंगाजी से मछली पकड़-पकड़कर हम जि
जी ले जाएंगे।—माई-वावू की कायरता से मन घवड़ा गया है
जमुना सिंह की छड़ी के निशान का भले कोई मतलव नहीं हो
अगिनिया तो अभी तक उसी अपमान में झुलस रही है। विधवा वे

कोई हुलस नहीं होता, न कोई भावर न गीत-मानर या विधि-विधान होता है। खाली बेटी को उठाकर बैलगाड़ी में भेज दिया जाता है। आज से दसवें दिन कोई बैलगाड़ी लेकर आएगा और एक पीली साड़ी पहनाकर अगिनिया के साथ चल देगा।

अगिनिया दुआर पर जंजीर पकड़कर झूल रही है। बिरदा राय के अखाड़े पर डंका बज रहा है। महावीरी झंडे के साथ लोग गांव चौगेठने वाले हैं। अगिनिया के जनम से भी बहुत पहले, पुरखा-पुरनिया के जमाने से ही अखाड़े से झंडा उठता है और मिरीटोला होते हुए गनपतटोला के पास फिर लोग कूदते-फांदते अखाड़े पर लौट आते हैं। युवक, जवान और बूढ़े भी तरह-तरह की कलाबाजियां दिखलाते हैं। बनैठी, तलवार और लाठी के करतब में थोड़ी देर के लिए सारा गांव अपनी तकलीफें भूल जाता है।

'बजरंग बली की जय' की हर्ष-ध्वनि से आकाश गूंज रहा है। डंके की गड़गड़ाहट हर्ष-ध्वनि को और भी गहरा देती है। अगिनिया को रह-रहकर भान हो रहा है, अपना ममदू उछल-उछलकर बनैठी भांज रहा होगा। आंखों और हृदय में बेजोड़ अकुलाहट है, हिरन की भांति चौकड़ी मार दे और एक ही छलांग में गोहार जैसी स्थिति में ममदू को भर नजर देख ले। 'जीव रे ममुदवा, जीव!' की आवाज बीच-बीच में कानों में रस घोल जाती है। अगिन और भी ज्यादा मदहोश जंजीर के ऊपर भारी लटकती जा रही है। पावों में अखाड़े की ओर भागने के लिए कोई गुदगुदा रहा है। मगर विधि ने उसके चारों ओर लक्ष्मणी-रेखा खींच दी है—वह तड़प सकती है, कहीं बाहर नहीं जा सकती है।

हर्ष-ध्वनि गांव की ओर झुकने लगी है। अखाड़े से लोग गांव की ओर चल पड़े हैं। आंखों में ममदू स्पष्ट हो गया है, आगे-आगे बनैठी बेतहाशा नचा रहा है। हमउम्र उल्लास में चारों ओर से घेरकर उछल रहे हैं। अगिनिया का धीरज टूट गया है। उसका उल्लास लक्ष्मण-रेखा भी तोड़ने के लिए बेताब है। वह बिना लाज-शरम के बच्चों की तरह दौड़ पड़ी है।

फगुनहट सरसराकर अगिनिया को अंकवार में समेटने की कोशिश करता है, मगर इस समय तो उसके उल्लास के सामने वयार भी मात खाता जा रहा है।

वह सीधे जाकर अखाड़े के सामने आम के पेड़ के पास खड़ी हो जाती है। वहां कुछ औरतें और बच्चियां पहले से हैं। अगिनिया को थोड़ा सहारा मिलता है और वह उनके भीतर समा गयी है।

अबीर से लदफद ममदू का गोरा चेहरा कैसा वमक रहा है! ससुराल जाने के बाद पता नहीं ममदू का यह रूप कब देखने को मिलेगा। हो सकता है, ममदू का यह आखिरी ही दर्शन हो। इच्छा भर नजर के भीतर ममदू को उतारती जा रही है अगिनिया। जिस औरत के कंधे से लगाकर अगिन खड़ी है वह गंवई रिश्ते में भौजाई लगती है। "एक बात बता ना, भौजी।" अगिन उसके कान के पास मुंह ले जाकर पूछती है।

"पूछ ना रे, छिनाल?" औरत उसकी ठुड्डी पकड़कर कहती है और खिलखिलाकर हंस देती है।

"बेटी पराया धन कैसे है?"

"उस ऊपर वाले मालिक की मर्जी, बबुई!"

"ऐसा नियम नहीं बन सकता क्या कि गांव की बेटी गांव में ही रह जाय!"

"हाय दइया!" भौजाई अचरज से आंखें फाड़ती है, "यहीं किसी से नजर लड़ा बैठी हो क्या, ननदोई?"

अगिनिया जवाब नहीं देती। मुस्कराकर रह जाती है।

मंडली चारों ओर घूम रही है। डंके की गड़गड़ाहट से सारा गांव झनझना उठा है। अगिनिया भी बच्चों के साथ पीछे-पीछे चल रही है।

संझवाती के दीए एकाध घरों में जलने लगे हैं। अगिन फिर दुआर पर लौटकर टकटकी बांधे खड़ी है। ममदू से बतियाने का भी संभवत: अब मौका नहीं मिलेगा। तभी माई पीछे से आकर अगिन की बांह खींचती हुई चिल्लाती है, "का रे अगिनिया? मरद के गोल में डंडा-बनैठी नचाने का

मन है क्या ? जा कलमुंही, ममुदवा यार के साथ हिस्सेदार काहे नहीं बन जाती ?"

"काहे रे माई, दिन पर दिन ऐसी कठोर काहे बनती जा रही है ? अब से बाहर भी नहीं जाऊंगी। यह ले।" वह अन्दर दौड़कर चली जाती है।

"लगन चढ़ा है। गरीब आदमी पर हजार आंखें होती हैं। बात बुझने की कोशिश काहे नहीं करती है ?"

अगिनिया निढाल खटिया पर फफक रही है।

माई तो बेटी को गोरक्षिणी की गाय समझ रही है। बाबू के मुंह से सुन चुकी है कि उसका नया मरद चालिस के थोड़ा नीचे है। इसका मतलब ही है कि वह चालीस से जरूर ऊपर होगा और पचास के आसपास होगा। पचास बरिस का आदमी उसकी कितनी रक्षा कर पाएगा। मझिआंव के बारे में सुन चुकी है कि वह गांव बहुत लहक रहा है। तब तो उसके मरद को भी उतना कमजोर नहीं होना चाहिए। जिस पहले लड़के से अगिन ब्याह दी गयी थी उसे तो वह भर आंख देख भी नहीं पायी थी। विवाह में या मड़वा में लड़की को अपने यहां कहां कहीं ताकने दिया जाता है। बस, गट्ठर की तरह ठकुराइन घर के किसी कोने से उठाकर लाती है और मड़वा में वर के बगल में बोरे की तरह छोड़ जाती है। लड़की के हाथ-पांव तक को भी कपड़े से बाहर नहीं रहने दिया जाता है। सिन्दूरदान के समय भी तो दूल्हा कपड़ों से ढके ललाट को छूकर छोड़ देता है, थोड़ी ही देर बाद बामन के आदेश पर ठकुराइन लड़की को उठाकर डोली या बैलगाड़ी में रख जाती है। लड़की परायी धन के असली रूप में बदल जाती है। पहली शादी में तो अगिन को यह मौका ही नहीं आया था। इस बार तो पचास बरिस का दूल्हा उसे बैलगाड़ी पर बिठाकर जरूर ले जाएगा।

बारात के दिन कोई चहल-पहल नहीं थी। न कोई बाजा था, न आंगन में औरतें ढोलक पर गीत ही गा रही थीं। यह तो विधवा-विवाह था। लड़की कुंआरी होती तो गीत-मानर चल सकता था। खाली पैट्रो-

मैक्स आंगन में जल रहा था। वही जरूरत पड़ने पर दुआर पर चला आता और फिर उसे लोग आंगन में वापस ले जाते। बाराती के नाम पर दूल्हा के अलावे चार सयाने और सात-आठ बच्चे थे। ऊपर से गाड़ी के साथ दो बैल और एक गाड़ीवान भी है। अकसरहां, हर मां बेटी के ब्याह में वरपक्ष की ओर से बाजे की आकांक्षा जरूर रखती है। मगर अगिन की मतारी की तो ऐसी सारी आकांक्षाएं मरी हुई थीं। अगिन सोचती है, एक विधवा के मांग में सिन्दूर पड़ने जा रहा है, इस खुशी में तो कम से कम बाजा भी जरूर बजना चाहिए था। अगिन के पड़ोसी हैं सहदेव काका। जवार-पथार में शहनाई बजाने में उनका काफी नाम है। अब तो वे बहुत बूढ़े हो गए हैं। बचपन में अगिन से कहा करते थे, मैं अगिनिया बेटी के ब्याह में मुफत शहनाई बजाऊंगा। मगर आज अगिन देखती है कि सहदेव काका उसके आंगन में बुझे-बुझे बैठे हैं। संभवतः उन्हें अगिन से बचपन के वायदे का कोई ख्याल नहीं होगा। जी में आता है, बढ़ऊ को झकझोर दे अगिनिया—का हो काका, भूल गए अपना वायदा? गोद में उठा-उठाकर कहा करते थे, मैं अपनी अगिन बिटिया के ब्याह में शहनाई मुफत में बजाऊंगा, झूम-झूमकर बजाऊंगा। आज तुम भी इस अभागिन को विधवा समझकर भूल गए क्या? या गांव-घर के रस्म-रिवाज से डर गए हो? कम से कम मतारी-बाप नहीं करते तो तुम मेरी साध को पूरा क्यों नहीं कर देते। तुम तो यह भी कहा करते थे कि गरीब आदमी को गरीब आदमी ही पूछता है। चाहे लोग मेरी मिहनत-मजूरी जो दे दें मगर मुझे तो अपने ही लोगों के दरवाजे पर शहनाई बजाने में मजा आता है। तब मेरे आंगन में मन मारकर क्यों बैठे हो! सचमुच काका! एक बार अपने घर से शहनाई लाकर बजा दो, मैं तुम्हारी शहनाई पर लोक-लाज बिसारकर नाचूंगी।

अगिनिया फिर खटिया पर निढाल फफक रही है। माई और टोला-पड़ोस की औरतें समझती हैं, ससुराल जाने वाली बेटी की इसी तरह माया फटती है। माई-बाबू का वियोग बर्दाश्त नहीं होता तो बेटी इसी तरह एक हफ्ता पहले से ही बिफरती है। अगिन को इसके समानान्तर

एक और पीड़ा थी। आज माई-वावू अगर ममदू के दरवाजे पर खुशी-खुशी पैदल भेज देते तो अगिन इस हालत में भी दौड़कर सहदेव काका के घर में जाती और शहनाई उन्हें थमाकर चिल्लाती—काका, आज मैं सृष्टि की सवसे भाग्यशाली विटिया हूँ। तुम शहनाई वजाओ, मैं नाचूंगी। अगिन का मन भीतर-भीतर कितना चीख रहा है—अरे ओ गांव वालो ! जगपत वावा के ढोंग पर मरने वालो ! तुम मुझे मेरे ममदू के हवाले कर दो। मेरा जनम ही ममदू के लिए हुआ है। दरवाजे से मझिआंव के इस बूढ़े दूल्हा को लौटा दो और उसी की वैलगाड़ी में मुझे विठाकर ममदू के घर पर भेज दो। मगर अगिन के मन की चीख कौन सुनता है ? अगिन की उम्र की दो-चार वहू-वेटियां भी सोचती हैं, दुखी काका ने मझिआंव वालों से जरूर रुपए लिए हैं। नहीं तो ऐसी जवान वेटी को कौन मूरख वाप वूढ़े के खूंटे में वांधेगा ?

ममदू साला कहां मर गया है ? वह मुझे उठाकर क्यों नहीं ले जाता ? वह तो मरद वच्चा है ? उसे कैसी लोक-लाज है। शास्त्रों में तो लोक-लाज वेटी की आभूषण होती है। मरद वच्चे के लिए क्या आभूषण होता है ?अगिन रोती है और क्रोध में ममदू को गलियाती भी है। साला ममदू कायर नहीं है तो अभी तक उसे भगाकर ले जाने के लिए आया क्यों नहीं ? यही होता कि गांव में रहने की कोई जगह नहीं मिलती। मगर गंगिया माई का आंचल तो है। उसी की गोद में नाव पर ही ममदू और अगिन अपनी सारी जिन्दगी गुजार देते।

घर में सभी जल्दी-जल्दी सो गए थे। भोर में वेटी की विदाई है। जल्दी नींद तोड़नी है। अगिन को तड़पता छोड़ माई भी सो गयी थी। हाय रे माई ! कैसी है तू ! माई हो, कि कसाई। अगिन की तरह नव्वे प्रतिशत लड़कियां तरसती रह जाती हैं उनकी नसीवा डोली कहां रहती है। वापों को पैसे नहीं होते कि कहारों को चुका सकें। वैलगाड़ी तो दूल्हा-दुलहिन के अलावे काफी सामान ले जाती है। वैलगाड़ी के एक कोने में पर्दा घेरकर दुलहिन को गट्ठर की तरह लुढ़का दिया जाता है।

किरण फूटने के पहले अगिन को गांव की ठकुराइन बैलगाड़ी पर चढ़ाकर सीवान तक छोड़ आयी है। अगिन गंगिया माई और ममदू को तजकर पिया के घर जा रही है। तू भी कैसा मरद है रे ममुदवा! कहीं से आ क्यों नहीं जाता और अपनी अगिनिया को 'ओहार' के भीतर से काढ़कर गंगिया माई की गोद में छिपा लेता। मझिआंव का बूढ़ा पिया अगिन की क्या रक्षा करेगा! अगिन का सहायक बनने के लिए कोई भी मरद आगे आने का साहस नहीं रखता।

धीरे-धीरे सूरज ओहार के भीतर झांक रहा है। अगिन एक कोने से बाहर झांकती है, बैलगाड़ी गांव से बहुत दूर निकल आयी है। गाड़ीवान उससे पूछता है, "प्यास-व्यास तो नहीं है, अगिनिया। लोटे में गंगाजल ला दूं?"

"नहीं भइया," अगिन अभी तक डबडबायी हुई है। "सुखारी भइया, गंगा कितने कोस में हैं?"

"यह तो उनको भी नहीं मालूम पगली। बोल, प्यास लगी है तो पानी ला दूं?"

"मझिआंव तक भी है न?"

गाड़ीवान हंसता है। "हमारा गांव हेठार में है—सीधा उत्तर। उसके ठीक उलटकर मझिआंव है, यहां से बारह कोस दक्खिन। किरण डूबने के पहले पहुंच गए तो संयोग समझो।"

दूल्हा किसी के साथ साइकिल पर बैठकर दूर निकल गया है। अगिन के दिनेसर भाई आज होते तो बैलगाड़ी के साथ चलते। दिनेसर तो कलकत्ता बस गया है। बाबू भी सबर कर गये हैं, माई भी रो-धोकर एक तरह से भुला ही गयी है। मेहरारू को साथ में लेकर गए तबसे मतारी-बाप को भी बिसार गए हैं। बहिन की तो बात ही अलग है। जब-तब बाबू याद करते हैं तो डबडबा जाते हैं या भोकार पार कर रोने लगते हैं। कहते हैं, अब अगिनिया ही मेरे लिए बेटा-बेटी सब कुछ रह गयी है। यही समझ लूंगा कि दिनेसर नाम का कभी मेरा भी एक बेटा था। ममेरा भाई आया था, मगर

पता नहीं बाबू ने अगिनिया के साथ क्यों नहीं भेजा है। अभी तक तो यही परिपाटी है कि वहन के साथ भाई डोली या बैलगाड़ी के पीछे-पीछे जरूर जाता है। अपना न हो तब भी गांव-घर का या रिश्ते का वहन के साथ उसकी ससुराल जरूर जाता है। अगिनिया तो सब विध अभागिन है। बाप-मतारी तो उसे माथे से उतारकर हल्के हुए हैं।

रास्ते भर वह चकित होकर चलती रही है। कहीं तो दूल्हा दिखता? जिज्ञासा भी अगिन में भट्ठी की तरह भभक रही है। इस भट्ठी में एक न एक दिन वह बूढ़ा भी जलेगा!

सारा गांव और जवार-पथार अगिन को बदचलन कहता है—अगिनिया रांड़ एकसौ मरद के अकेली कान काटती है। तनिक भभक्का गोरी नहीं हुई, होती तब तो मरदों को नचा-नचाकर मारती। मगर भगवान ने बना दिया कच-कच जामुन फिर। भी रस भरे और भरे-पूरे जामुन की तरह अगिनिया गांव के कई जवानों को आकृष्ट करती रही है। परन्तु उसके डर से किसी को सटने की हिम्मत नही हुई है। जगपत बाबा ने जब सरजू के लौंडे को तड़ातड़ ढेला चलाकर मारते देख लिया तो उनके होश-हवास गुम। बाप रे! दुखिता की छोकरी तो गजब चाकूमार है। गांव में किसी न किसी का खून करके रहेगी। अगिनिया की मस्ती और हिरन की तरह चाल में जगपत बाबा भी फंसकर रामनामा चादर फेंकने के लिए तैयार थे। कई-कई रात अगिनिया को लेकर बुरे-बुरे ख्याल आते रहे थे। मगर ममदुआ के साथ 'रसलीला' उनके मानस में महाभारत मचा रहा था। वे अगिनिया के चालचलन के खिलाफ समूचे गांव में चक्र घुमा रहे थे। तब भी अगिनिया उनकी चादर में विश्राम के लिए तैयार नहीं हुई थी। उल्टे भद्दी-भद्दी गालियां पढ़ने लगी थी। खैरियत थी कि जगपत बाबा सामने अरहर में लाज की मार से समा गये थे और उन्हें किसी ने देखा नहीं था। अगिनिया के साहस का क्या भरोसा! कहीं ढेला ही उठाकर तावड़तोड़ चलाने लगती तब? जगपत बाबा रस्सी की तरह जलकर भी अपनी ऐंठन नहीं छुड़ा पाये थे। अगिनिया जैसी लड़की को जगपत पांडे जैसी परम्परा की कहां परवाह

थी। इतना सच तो जरूर है कि ऐसी परम्परा आदमी के समूह को नष्ट करने के लिए काफी होती है। दुखित ने ऊबकर ही बूढ़े वर के गले से बेटी को फांस दिया है।

वैलगाड़ी मझिआंव के सीवान पर आकर रुकी तो सांझ की किरण लपलपा रही थी। वगीचे में लड़के-लड़कियों के झुंड शोर मचाने लगे—"कनिआ हो, दूगो धनिया द। लाल मिरचाई के फोरन द ! भाई अलव भेंट करऽ।" अगिन के पति का नाम रामरतन है। रामरतन के अपनी पहली पत्नी से चार लड़कियां हैं। दो की तो उसने शादी कर दी है। एक लड़का जो सवसे वड़ा है हावड़ा में स्टेशन के वाहर टैक्सी-स्टैंड के पास जूते-मरम्मत का काम करता है। रामरतन के साथ वडे लड़की की पटरी नहीं वैठती है। वह भी एक तरह से कलकत्ता में वस ही गया है। सुनने में तो यहां तक आता है कि उसने एक वंगालिन से व्याह भी कर लिया है और उसके दो वच्चे हैं। रामरतन की दोनों वडी लडकियां वावू के व्याह में न्योता के वावजूद नहीं आयी है। वे नाराज हैं कि वावू को इस उमिर में व्याह की क्या जरूरत पड़ गयी है। एक लड़का है, अच्छा कमाता-खाता है। अगर वावू का ही स्वभाव ठीक रहता तो भैया रूठकर परदेश क्यों रह जाते ? वावू को तो दोनों छोटी लड़कियों की चिन्ता रखनी चाहिए कि एक-दो साल में इनके भी हाथ पीले कर देते और निश्चित हो जाते। रिश्तेदारों में रामरतन की केवल छोटी वहन न्योते पर आयी है।

रामरतन की दोनों लड़कियां—सुगिया और मरछिया अपनी फुआ और टोला-पड़ोस की औरतों-लड़कियों के साथ अपनी नई माई की अगुवानी के लिए खड़ी हैं। जव सुगिया और मरछिया एकदम छोटी थीं तभी इनकी माई चेचक से मरी थी। दोनों वहनें भीतर-भीतर डवडवाई हुई हैं। अपनी माई की याद वहुत आ रही है। मालूम नहीं, इस मतारी के साथ कैसा रिश्ता रहेगा। सुनती हैं, जव सौतेली मतारी को अपना वाल-वच्चा होता है तो सौतेले वाल-वच्चों को खाली भूलती ही नहीं हैं, दुश्मन भी वन जाती है। सुगिया अभी दस साल की है। मन ही मन कलकत्ते वाली

काली माई से विनती करती है—"हे काली मइया। जब तक हम दोनों बहनें यहां मझिआंव में हैं तब तक इस सौतेली मतारी को कोई बाल-बच्चा नहीं देना। जब बाबू हम दोनों को किसी के हाथ थमा दे तभी जो भी हो करना। बाबू का घर हमारे भाइयों से भर देना। हमें क्या एतराज हो सकता है ! बाबू घर भरने के लिए ही तो नई माई को ले आए हैं।"

लगभग दस-ग्यारह बजे रात तक सुगिया और मरछिया अपनी नई माई के साथ ही कोहबर में रही हैं। माई का स्वभाव बड़ा मीठा है। अपनी दोनों बेटियों के साथ हंस-हंसकर बतियाती है। सुगिया और मरछिया माई की थाल में ही एक साथ दाल-पूड़ी और बैंगन की तरकारी खाई हैं। अचानक सुगिया की आंख छलछला जाती है।

"क्या बात है, सुगिया। काहे रोती हो ? मुझसे कोई कसूर हो गया, बिटिया !" अगिन का सारा मन बिटिया कहते ही हाहाकार करने लगता है। अचानक उसकी माया फुफकारने लगती है।

"मेरी माई इस समय बहुत याद आ रही है। इसी तरह हम दोनों उसके साथ ही खाते थे। मरने के दिन माई का चेहरा कितना हंसमुख था। जैसे वह हमें छोड़कर कभी नहीं जाएगी। मगर···" सुगिया फफक-कर रोने लगती है और बातें पूरी नहीं कर पाती है।

"मैं तुम दोनों की वही माई फिर आ गई हूं।" वह सुगिया और मरछिया के लोर अपने आंचल से पोंछती है और अगल-बगल अपने साथ सुलाती है। 'तुम लोग रोज मेरे साथ ही सोना। ठीक है न, मछरिया ?'

"हां, माई।"

"हमारी माई भी रोज हमें अपने साथ ही सुलाती थी।" सुगिया बोलती है। मरछिया को तो अगिन ने छाती में ऐसे चिपका लिया है जैसे वह अगिन से ही जन्मी हो।

"सुन, मरछिया। एक कथा सुनाती हूं।"

"सुना न, माई ?" सुगिया कुहनियों के बल उठकर अगिन की पीठ पर झुक जाती है।

"एक आदमी था—"

"आदमी था ? राजा नहीं था क्या ?" मरछिया टोकती है ।

"नहीं रे, पगली ।" अगिन हंसती है—"राजा तो आदमी नहीं होता न ?"

"तव ?" मरछिया और सुगिया दोनों चौंकती हैं ।

"वह तो शैतान होता है ।"

"ठीक कहती हो !' मरछिया उठकर बैठ जाती है, "जरूर राजा शैतान होता है । सुगिया दीदी से पूछना । अपना ही मालिक कितना बड़ा शैतान है ? बराबर बाबू को गलियाता ही रहता है ।"

"क्या मतलब ?" अगिन भी चौंककर बैठती है ।

"बाबू रात-दिन उसी का काम करते रहते हैं । तव भी इन्हें गलियाता ही रहता है । एक दिन तो बाबू को मार भी दिया था ।"

"और तुम्हारे बाबू ने बर्दाश्त कर लिया था ।"

"तव शैतान के सामने क्या करते ?"

"ये भी उसे मारते ।"

"बाप रे ।" सुगिया चिल्लाती है । 'नहीं रे, माई । नहीं । आज तक किसी ने मालिक को कुछ कहा ? वह चाहे जो कर दे । बाबू अगर कुछ बोल भी देते तो क्या इनकी जान बच पाती ! गांव में उन लोगों के भय से कोई कुछ बोलता है क्या ?"

"किन लोगों के ?'

"मेरे मालिक जैसे और भी तो तीन-चार हैं इस गांव में । बाकी सभी लोग तो भेड़-बकरी हैं ।"

अगिन सोचने लग जाती है । दोनों लड़कियां उसे कथा आगे बढ़ाने के लिए तंग कर रही हैं । मगर अगिन जैसे हठात् आगे की कथा भूल गई हो । वह इतना ही कह पाती है, "तुम लोग अभी सो जा । आगे की कथा भूल गई हूं । दिन में याद करूंगी । फिर कल रात में सुनाऊंगी ।

मरछिया फिर माई को उसी तरह पकड़ कर लेट गई है । दोनों बहुत

जल्द सो गई हैं। मगर अगिन को नींद नहीं आ रही है। उसने अपने मरद को वहुत हल्के देखा था। सिरीटोला से चलने के वाद गाड़ी के पीछे-पीछे आ रहा था। शरीर से तो थका-मांदा या बूढ़ा नहीं लगता था, मगर साथ-साथ चलने वाले एक नौजवान को देखकर अगिन जरूर तरस रही थी कि यह साला बूढ़ा मरद उस नौजवान की तरह क्यों नहीं हुआ। अव मालिक वाली वात सुनकर अगिन के भीतर एक उपेक्षा का भाव भी वनने लगा है। लगता है, मन से भी मरद इसके लायक नहीं मिला है। अगिन का मरद पानी से भी ज्यादा शीतल हो, ऐसा कभी नहीं हो सकता।

यह दोनों लड़कियों से और भी कुछ वतियाने और जानने की कोशिश करती है। मगर दोनों अर्द्ध निद्रा में आंखें खोलती हैं और फिर सो जाती हैं।

किवाड़ के दोनों पल्ले आपस में सटे हैं। ताखे पर ढिवरी जल रही है। चारों तरफ सन्नाटा है। वांसवाड़ी से जव-तव खड़खड़ाहट होती रहती है। वल्कि रात के कारण वांसवाड़ी में जोरों का शोर है। इस शोर के वावजूद सन्नाटे का आतंक चारों तरफ से गहरा रहा है। ऐसे में फुआ जी किवाड़ भिड़काकर अन्दर आ जाती हैं और सुगिया-मरछिया को चुपके से जगाकर ले जाती हैं। वे जाना नहीं चाहतीं, फुआजी को अचरज होता है। लड़कियां नई माई से दो-चार घंटे में ही कैसे घुल-मिल गई हैं। समझाती हैं, विटिया रे! आज की रात माई को अकेली छोड़ दे। दो-चार दिन वाद सोना। आज नहीं। सुगिया और मरछिया मन मसोस कर खटिया से उठ जाती हैं।

उसी तरह लम्वा होता हुआ सन्नाटा है। रामरतन ढिवरी के निकट से इतना देखता है कि वह चित्त पड़ी है और सम्पूर्ण छाती को आंचल से ढककर निढाल पड़ी हुई है। वाकी सव कुछ अस्पष्ट है। वह धीरे से खाट पर वैठ जाता है और अगिन की दोनों छातियां पकड़ने की कोशिश करता है। वह चिहुककर उठती है और खटिया से नीचे उतरकर आंगन की ओर सरकने लगती है। मगर रामरतन अपनी दोनों वांहें फैलाकर उसे घेर लेता है। अगिन को क्रोध आता है, कैसा गूंगा-वहरा मरद है! [illegible]

परिचय-वात कुछ भी नहीं, खाली कामवासना? वावू ने
या के साथ यह क्या कर दिया? रामरतन उसे गोद में भरने
ोशिश करता है। मगर अगिन उसे इतनी ताकत लगा कर
ती है कि वेचारा धड़ाम से जमीन पर गिर जाता है। आगे उसमें
भी हिम्मत नहीं रह जाती है। वह विचारता है, आज पहली रात है।
ली रात का औरतों का इस तरह कूद-फांद स्वभाव होता है? मगर
रत तो रांड़ है। भले किसी मरद से भेंट न हो मगर अनुभवी तो है।
छ भी हो, पहली रात के वर्ताव ने रामरतन को हीनता से भर दिया
या।

अभी स्पष्ट भोर भी नहीं हुआ था कि दरवाजे पर मालिक की आवाज
सुनकर चौंकता है। वेचारा रात ओसारे में ही सो गया था। मालिक ऐसे
वरसते हुए राम-राम की पहर चमटोली कैसे चले आए हैं? कोई गाढ़ी
आफत है क्या?

"सलाम, मालिक।" रामरतन खटिया को सामने से ओट में रखने
की कोशिश करता है; क्योंकि जिसके सामने वाप-दादों से लेकर आज तक
खाट या ऊंचे आसन पर वैठने की हिम्मत नहीं हुई उस मालिक की नजर
उस पर खटिया पर सोये हुए पड़ गई थी। वह भीतर से भी वहुत
लज्जित था।

"सलामी की वात तो पीछे है," मालिक चिल्लाकर वोलता है, "ती
दिनों से कहां मर गया था?"

"मालिक, आपको जानकारी थी कि मेरी वारात सिरी पुर गई थ
कल शाम में ही लौटी है। मैं तो उठते ही दरवाजे पर पहुंचने वाल
था।"

"सरऊ मुंह मराने के लिए आज पहुंचोगे, जव तीन दिनों से ह
पिछड़ रही है? पता नहीं है कि खेती और औरत की जवानी पिछड़
फिर वापस नहीं आती है।"

"सो तो मालिक ठीक ही कहा गया है। अपने रतना का क

कर दिया जाए। तुरन्त दरवाजे पर हाजिर होता हूं।"

मालिक उसे गालियां बुदबुदाते हुए लौटता है।

रामरतन करता क्या वेचारा ! आज तो सचमुच उसे दिन भर अपनी नई औरत से वतियाने और हाथ से भोजन करने की इच्छा थी। मगर मालिक की मुनादी फिर गई है। अब उसकी इच्छा के खिलाफ जाने की इच्छा किसे है ? अकेले रामरतन ही नहीं है, कुछ और लोग भी हैं जो पता नहीं मालिकों की गुलामी सहते जा रहे हैं। कुछ दूरी पर तमाम गांवों में हरवाहों और कामगारों का संगठन बन गया है। वहां जमींदारी और ऐंठन सव खत्म है। हवा में बात जब-तब रामरतन के कानों में भी आती रहती है, मगर यह सब उसे सच नहीं लगता है। रामरतन के लिए राजा-रानी की कहानियां और हरवाहों-कामगारों के संगठन में क्या फर्क है—ज्यादा-से-ज्यादा सुनने से मन वहल जाता है, वस !

इस छोटी-सी घटना से अगिन एकदम अचम्भित है। यह मरद-बच्चा है या बछिया की दुम ? मालिक सरेआम गलिया कर चला गया है और यह मरद आंगन में मुंह लटकाए चुपचाप ऐसे बैठा है जैसे बेटे का दाह-संस्कार कर अभी श्मशान से लौटा हो। अगिन का मन बहुत छोटा हो जाता है।

वह हिम्मत कर भीतर से बाहर चली आई और बोली, 'यहां बैठकर क्या सोच रहे हो ?"

रामरतन चौंकता है। इस औरत ने तो रात सटने तक नहीं दिया। कहा, "मालिक के यहां जा रहा हूं।"

"कब तक लौटोगे ?"

"शाम तक।"

"आज नहीं भी लौट सकते हो ?"

"क्या मतलब ?"

"जब मालिक की ही मर्जी चलती है तो तुम्हारा क्या ठिकाना है।"

कुछ भी हो, अगिन को इस घटना से गहरा धक्का लगता है। वाकई,

मरद एकदम बूढ़ा है। इसके साथ निर्वाह मुश्किल है। कल तो वह मालिक उसे भी इसी तरह गलिया सकता है। लगता है जमुना सिंह की छड़ी का घाव फिर उसकी पीठ पर किसी ने उकेर दिया है।

दिन बहुत आसानी से बीत गया और पहाड़ की तरह रात चली आई है।

बाहर से रामरतन दरवाजा पीट रहा है। मगर अगिन ऐसे पड़ी हुई है जैसे मुर्दा हो। रामरतन के गिड़गिड़ाने का उस पर कोई असर नहीं होता। वह भीतर से बन्द कर सुगिया और मरछिया को लेकर सो गई है।

"सुगिया की मतारी, तनिक दरवाजा खोलना!" रामरतन चिल्लाते-चिल्लाते ऊब गया है।

"कोई काम है?" अगिन पड़ी-पड़ी ही बोलती है।

"हां, बहुत जरूरी काम है।"

"रोटी खाओगे?"

"नहीं, मैं मालिक के घर से खाकर आ रहा हूं।"

"तब पागल की तरह क्यों दरवाजा पीट रहे हो? चुपचाप ओसरे में रात की तरह खटिया बिछाकर सो जाओ!"

रामरतन लाचार होकर ओसारे में सो गया।

यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा। अगिन इतनी सजग थी कि उसके आने के पहले ही दरवाजा बंद कर लेती। आखिर इस बात को रामरतन किससे कहे? एक बहन न्योता पर आई थी। वह भी बारात के दूसरे ही दिन अपनी ससुराल वापस हो गई थी। घर में अपनी बेकत के अलावा दो बेटियां, चार-पांच बकरियां हैं—बस!

एकाध हमउम्र लोगों ने उसे राय दी, नई औरतें इस तरह नखरा करती हैं। एक दिन उठाकर पटक दो, सारी गर्मी ठंडा जाएगी।

रामरतन इसी क्रिया के लिए कृतसंकल्प था। मालिक मार भी बैठें तब भी कोई परवाह नहीं। आज हल दोपहर में ही खोल दूंगा। घर के अंदर चुपके से जा कर सो रहूंगा। उसने सुगिया और मरछिया को समझा-

बुझाकर पड़ोस के घर में सोने के लिए भेज दिया है। और मेहरारू की खटिया के नीचे छिप गया है।

जब अगिन आकर सो गई तो रामरतन नीचे से उतर कर खटिया पर बैठ जाता है। "तुम यहां कैसे चले आए?" वह उठकर खड़ी हो जाती है।

"मैं तुम्हारा पति हूं।"

"तुम्हारे जैसा बूढ़ा मेरा पति नहीं हो सकता।"

"इस बात को तुमने अपने बाप से क्यों नहीं पूछा था?"

"बाप ने मेरे साथ धोखा किया है।"

औरत एकदम चालू है। नैहर में जरूर किसी बड़े बाबू की रखैल होगी। वह पूछता है, "नैहर के किसी बाबू का ध्यान हो तो उसे भूल जाओ। अब तो तुम्हें इस हरवाह पर ही जिन्दगी गुजारनी है।"

अगिन चौंकती है। यह तो साला मरद गलिया रहा है। मालिक के सामने तो जबान तक नहीं हिलती। "बड़े बाबुओं की रखैल तुम्हारी मां-बहनें होंगी। हम इतने गिरे हुए नहीं हैं।"

"तब काहे नहीं सवाल सुन रही हो?"

अगिन रोने लगती है। "तुम मुझे अपने घर पहुंचा दो।"

अगिन अपनी जिन्दगी में बहुत कम रोई है। जब उसका पति मरा था तब माई के रोने से वह भी डबडबा जरूर गई थी। दूसरी बार वह तब रोई थी जब कसाई जमुना सिंह की छड़ी बर्दाश्त नहीं हुई थी। मगर उससे ज्यादा उसे गुस्सा था। आज भी अगिन अपने संकल्प पर दृढ़ है। अफसोस इसी बात का है कि उसका मरद संकल्प में हाथ नहीं बंटा सकता।

"क्या चाहती हो तुम? साफ-साफ बता दो।" रामरतन उसे मनाने की कोशिश करता है।

"मुझे नैहर पहुंचा दो।"

"तुम ऐसे मेरे साथ कब तक करती रहोगी?"

"जब तक तुम मुझे बूढ़ा लगोगे?"

"क्या सचमुच मैं बूढ़ा हूं?"

"हां," अगिन सिसकती हुई चिल्लाती है—"तुम बूढ़े हो, "हर तरह से बूढ़े। मैं तुम्हारे साथ एक पल भी नहीं रह सकती। तुम अपने मालिक की गालियां बर्दाश्त कर सकते हो और मुझे गालियां दे रहे हो कि मैं बड़े बाबुओं की रखैल हूं। छिः! न मालूम तुम्हारी कैसी परम्परा है!—"

अगिन देर तक रोती और बड़बड़ाती रही है और रामरतन बीच में ही लौटकर ओसारे में सो गया है।

क्या पता, इस सिलसिले का अंत कब होगा!

अगिन सिरीटोला के सामने पहुंची तो रात हो गई थी। जमुना सिंह के बगीचे में चुपचाप खड़ी है। गांव में घुसते ही बाबू सीधे निगल जाएंगे। अगर मझिआंव में यही बात सूझ गई होती तो अगिन के सामने दुविधा खड़ी हो जाती। शायद, रामरतन को अंगूठा दिखला कर भागने के पहले सोच-विचार करती। रामरतन से घिन के कारण ही वह अगिया बैताल की तरह अकेली चली आई है। पता नहीं, आम का अगोरिया सो गया है या जगा हुआ है।

अब क्या करे अगिन? पूरा टोला उसे बदचलन कहता है। बाबू से लेकर जमुना सिंह तक, सभी। उनके पांव सीधे गनपतटोला की ओर मुड़ जाते हैं। सारा टोला सो रहा है। कौन ठिकाना, ममदू भी घर पर नहीं हो। कहीं उसे जगाने में फरीदादी जग गई तो जुलुम हो जाएगा।

संयोग से ममदू दरवाजे के बाहर ही खटोले पर सो रहा है। आश्चर्य है! ममदू आजकल गांव में ही रहता है क्या? इस तरह अकेला घर से बाहर कैसे सो रहा है! जमुना सिंह की आंख में माड़ी पड़ गई है क्या? पूरे जवार-पथार में हलचल थम तो नहीं गई है!

वह धीरे से ममदू को जगाती है। "ममदू रे।"

ममदू अचकचा कर उठता है। "तू कहां से रे ?" वह आंख मलते हुए खड़ा हो जाता है। "मैं तो समझ रहा था, कोई पुलिस है ।"

दोनों गंगाजी के अरार की ओर बढ़ते हैं।

"गांव में इन दिनों कोई हलचल नहीं है क्या ?" अगिन पूछती है।

"यह कैसे ?"

"तुम घर से वाहर गांव में कैसे सो रहे थे ?"

"इधर जमुना सिंह से समझौता हो गया है।"

अगिन अंधेरे में चौंकती है—"यह सब कैसे रे ?"

"पीछे वताऊंगा।" ममदू उसका हाथ खींचकर वैठने की कोशिश करता है—"पहले यह तो वता मझिआंव से कव आई तू ? फिर मुझसे अचानक रात में मिलने की क्या जरूरत पड़ गई ? कल हम दिन में भी तो मिल सकते थे ?"

"चल, वहां अरार पर। हम वहीं बैठकर वातें करेंगे।"

दोनों अरार पर वहीं आकर बैठ जाते हैं, जहां वे अकसरहां बैठा करते थे। अन्हरिया रात गहराती जा रही है। अगिन गंगाजी की ओर झांकने की कोशिश करती है। इच्छा होती है, पहले वह वालू और पानी में खूब लोट-पोट हो ले तव रात भर गप-शप करती रहेगी। जिस प्रकार मां से बिछुड़ने के वहुत दिनों वाद मां को देखते ही छाती चीखने लगती है उसी प्रकार गंगिया माई का वियोग अगिन के भीतर तूफान पैदा किए हुए है। उसकी आंखें भरती जा रही हैं। वह अंधेरे में आंचल सरकाकर लोर पोंछ लेती है।

"तू यहां आते ही चुप्पी क्यों साध गई रे !" ममदू उसकी वांह पकड़ कर झकझोरता है।

"अन्धड़ उठ रहा रे।"

"कहां ?" वह चौंक जाता है।

"मन में। और कहां ? जी में आता है, अभी दौड़कर गंगिया माई से

लिपट जाऊं। अब तो यही एकमात्र मेरी मतारी रह गई है।"

"हां," वह पूछता है, "तुमने तो बताया ही नहीं कि ससुराल से कब आई है।"

"सीधे चली आ रही हूं।"

"सचमुच !"

"हां रे, ममदू।" अगिन बड़े आत्मविश्वास से बोलती है, "मैं हमेशा के लिए सचमुच छोड़कर चली आई हूं। अब जो कुछ भी मुसीबत आएगी उसका सामना करूंगी। इसी संकल्प से आ गई हूं। अगर तू मेरे लिए सहारा बन जा तो कुछ मेरे लिए रास्ता मिले।"

"मरद से बिलकुल नहीं पटता था क्या ?"

अंधेरे में अगिन खिलखिलाकर हंसती है। "पटने का सवाल ही कहां था। वह तो मेहरारू का सात मेहरारू है। तुम्हारे तो वह अंश भी नहीं है। मैं तो ऐसे मरद के साथ रहने से अच्छा बिना मरद के ही रहना समझती हूं। अब तो गंगिया माई चाहे बेटी की तरह स्वीकार कर ले या अपनी पेटी में समा ले। मेरे सामने तीसरा कोई रास्ता नहीं है।"

रात ढलती जा रही है।

अगिन लौटकर माई-बाबू के घर जाने के लिए तैयार नहीं है। इस सन्नाटे में किसी को पता चल जाय तो कुट्टी काटकर गंगा में बहा दे। ममदू के बहुत समझाने के बाद वह मान गई कि सुबह होते ही गांव में जाएगी।' इसके बाद अगर विपरीत परिणाम निकले तो ममदू भी उसका साथ देगा।

किरण फूटने के पहले टोले भर में हंगामा हो गया कि एक महीने बाद ही अगिनिया अपनी ससुराल से भाग आई है। माई अलग घर को माथे पर उठाए हुए है जैसे आंगन में गेहुंअन सांप घुस आया हो। अगिनिया तो दुखित के खानदान में पहली लड़की है जिसने नाक कटवा दी है। ऐसी बेटी मर भी जाय तो किसे अफसोस होगा ? दुखित बोला—"तू रास्ते में ही मर-खप क्यों न गयी रे, हरामजादी ? टोला-पड़ोस ठीक ही हंसता है कि

अगिनिया का चाल-चलन ठीक नहीं है। मरछिया काकी कहती है, जिस औरत को एक से दो मरद का चस्का लग गया उसे मरद बदलते रहने में क्या लाज है।" माई को यह बात अच्छी नहीं लगती। अगिनिया बेटी है मेरी कि मरछिया काकी की। माई ने क्या-क्या नहीं कह दिया अगिनिया को। मगर यही बात दूसरे लोग भी कहने लगें तो माई को अच्छा नहीं लगता है। मगर गांव-घर में जो होशियार औरतें होती हैं वे हवा का रुख गिनकर चलती हैं। घरवालों का जैसा रुख देखती हैं उसी तरह बकती रहती भी हैं। मतारी आखिर मतारी होती है। बेटी के लिए, वह भी ब्याहता बेटी के लिए मतारी को ज्यादा ममता होती है। मरछिया काकी खुद अपने बेटों से छिपा-छिपाकर बेटियों के यहां कुछ न कुछ पहुंचाती रहती है। उल्टी-सीधी बात सुनते-सुनते अगिन की मतारी भी ऊब गयी है। उसने मरछिया काकी को डपट दिया है—"किसकी बेटी-पतोहू भागकर नहीं आयी है क्या? आपकी बड़ी बेटी तो ब्याह के दूसरे-तीसरे दिन ही ससुराल से भागकर चली आयी थी। हमारी अगिनिया इतनी नासमझ नहीं है। हां, इसमें एक ही रोग है कि बहुत कड़े पानी की है। जान दे देगी मगर बात बर्दाश्त नहीं करेगी। हो गया होगा मरद से कुछ चखचुख। मगर किस औरत को अपने मरद से नहीं होता? यह गांव में अजीब बीमारी है, दूसरे की खामियों पर खूब तालियां पीट-पीटकर हंसो। अपने में वही ऐब हो तो उसकी खूबियां बखान करो।"

माई रात में अगिन से पूछती है, "बेटी रे! मरद बहुत गुस्से वाला है क्या?"

"नहीं रे माई।" अगिन बताती है, "यही तो अचरज की बात है कि उसमें गुस्सा ही नहीं है। रात-दिन मालिक के यहां भूखा-प्यासा खटता रहता है। मालिक से इतना डरता है कि घर पर खाना-पीना भी भूल जाता है।"

"मालिक खिलाता नहीं है?"

"काहे को माई। मालिक को इससे क्या मतलब?" अगिन को मालिक

का ध्यान आते ही क्रोध उभरता है। "तुम्हारे जमुना सिंह की तरह कसाई ! थोड़ी भी देर हुई कि गालियां बकता हुआ दरवाजे पर पहुंच जाता है और यह मरद दांत निपोरता हुआ उसके पीछे लग जाता है। एक रोज तो मैं खाने के लिए कहते-कहते थक गयी मगर अपने मालिक की गालियों से इतना डरा हुआ था कि मेरी वातें जैसे उसने सुनी ही नहीं। वह शरीर से नहीं माई, मन से भी लुंज-पुंज और वूढ़ा है। तुम लोगों ने भी मेरे साथ कहां इंसाफ किया है ?"

अगिन की आंखें भरी हुई हैं।

माई समझाती है, "ऐसी वात वेटी-पोतहू के मुंह से शोभा नहीं देता, अगिनिया। लोग हंसी-मजाक के लिए ही हैं। सुनेंगे तो हंसी उड़ाएंगे। अपने पति को वूढ़ा कहना पाप है। भरसक लोग तुम्हें पापिन नहीं कहते ?"

"चाहे जो कहो माई, मगर मैं मझिआंव लौटकर नहीं जाने वाली हूं।"

"तव यहां रहकर क्या करोगी ?"

"यहीं मिहनत-मजूरी करते हुए जिन्दगी गुजार दूंगी।"

माई की आंखों में उस दिन का दृश्य नाच रहा है, जव अगिनिया गांव से विदाई ले रही थी। वैलगाड़ी में 'ओहार' लग गया था। वैल खा-पी चुके थे। उन्हें पन्द्रह-सोलह कोस चलना था। वैलों के गले में वंधी घंटी वजने लगी थी और वैल गाड़ी में जुत रहे थे। तभी माई फुवका फाड़कर रोने लगी थी, वेटी सचमुच पराया धन होती है। वेटी ससुराल जा रही है, अपने पिया जी के देश। फिर से वैलों के गले की घंटियां टुनटुनाने लगी थीं। वेटी ओहार के भीतर वैठ गयी थी। गाड़ीवान ने जोर से वैलों को ऐड लगायी थी, गाड़ी लीक पर आकर दौड़ने लगी थी। दुखित वेटी की विदाई वर्दाश्त नहीं कर सका था तो अरार की ओर चला गया था। ओहार के भीतर से अगिन के 'वावू हो-माई हो...' कहकर रोने की आवाज तव भी सुनाई पड़ जा रही थी। दुखित फफक-फफककर रोने लगा था।

आज भी दुखित अरार पर उदास वैठा है। मझिआंव से पाहुन आए थे। दुखित ने समझा-वुझाकर लौटा दिया था कि एक महीने वाद आकर लिवा जाइयेगा। जव आयी है तव कुछ दिनों के लिए रहने दीजिए। पाहुन समझ-वूझकर चला गया था। टोले के दो-चार लोगों ने उसे राय दी थी, अगिनिया को अभी पीछे लगा दो। तव जाकर चाल-चलन में सुधार लाएगी। मगर दुखित को यह वात पसन्द नहीं आयी, लोग यही न कहेंगे कि वेटी दुखिता के सिर पर सचमुच वोझ थी। तभी तो भागकर आयी और विना नया कपड़ा-लत्ता पहनाए ही पहुना के साथ भेज दिया। गांव में जगहंसाई का कोई ओर-छोर थोड़े ही है। जो भी काम करो, हंसी उड़ाने वाले उड़ाते ही हैं। अचानक सामने से जमुना सिंह आते हुए दीख जाते हैं। वह उनसे वचने की भरपूर कोशिश कर रहा है। मगर वहां से उठकर चल देने का दूसरा रास्ता ही कहां है।

"सुना है दुखित, तुम्हारी अगिनिया ससुराल से भाग आयी है।" जमुना सिंह की आवाज दूर से सुनायी पड़ती है।

"हाँ मालिक।"

"कोई वात हो गयी थी क्या ?"

"वात क्या हो सकती है।" दुखित व्यर्थ में हंसने की चेष्टा करता है, "दुनिया का यही चलन है तो मेरी वेटी उससे अलग कैसे रहेगी।'

"चाहे तुम जो कहो दुखित, मगर अगिनिया स्वभाव की अच्छी लड़की नहीं है।"

दुखित ने जैसे जमुना सिंह की वात सुनी नहीं हो। "असल में गलती मुझसे ही हो गयी। लड़के को मैंने पहले देखा भी नहीं था। असल में किसी समझदार आदमी ने कहा है न, मालिक—

"परहथ वनिज, संदेसे खेती,
विन वर देखे व्याहे वेटी।
द्वार पराये गाड़ै थाती,
ये चारों मिलि पीटैं छाती।"

जमुना सिंह को दुखित जैसे लोगों के मुंह से ऐसी बातें सुनकर अच्छी नहीं लगतीं। उनकी कल्पना में तो ऐसे लोग मूर्ख, जाहिल और दुष्ट होते ही हैं।

जमुना सिंह बड़े जोर से ठठाकर हंसता है। "उस जनम में जरूर पंडित होगा, दुखिता।"

"कैसे, मालिक।" उसे जमुना सिंह की हंसी से चोट जरूर लगी है। "खाली पोथी बांच देने से या ऐसी कहावतें कह देने से कोई पंडित थोड़े हो जाता है। पंडित का तो करनी भी चाहिए। आज्ञा हो तो एक कथा सुना दूं?"

जमुना सिंह की हंसी तब भी जारी है। "सुना दे। तू भी क्या सोचेगा। सुबह-सुबह चमार से ही पुराण-कथा सुनने को करम में लिखा था।"

"पुराण-कथा नहीं मालिक, सच्ची कथा है।" दुखित सुनाने लगता है, "एक बार कोई बहुत बड़े पंडित सब पोथी पढ़ने के बाद घर लौट रहे थे। उन्हें यहीं से गंगाजी को पारकर उस पार जाना था। सुखिया मल्लाह जब नाव लेकर थोड़ी देर आगे बढ़ा तो पंडी जी ने उससे पूछा, बच्चा शास्तर पढ़े हो? सुखिया बोला, नहीं, बाबा! आप पहला आदमी हैं जो मुझे पढ़ने के लिए सलाह दे रहा है। पंडी जी ने नाराज होकर उसे श्राप दिया—जा, ससुर! तुम्हारी आधी जिन्दगी अकारथ है। थोड़ी दूर आगे जाने के बाद पंडी जी फिर सुखिया मल्लाह से पूछते हैं—महाभारत पढ़े हो? मल्लाह कहता है—बाबा, यह नाम तो मैं पहली बार सुन रहा हूं। पंडी जी ने फिर श्राप दिया, जा रे अभागा। तुम्हारी तो बारह आने जिन्दगी अकारथ है। कुछ और आगे नाव बढ़ी तो पंडी जी ने फिर पूछा—और रामायण, बचवा? सुखिया बोला—नाम तो सुना है, मगर कभी पढ़ने का मौका नहीं मिला। पंडी जी का गुस्सा इस बार सीमा पार कर गया था, उन्होंने कहा—जा रे ससुर मल्लाह। तुम्हारी तो चौदह आने जिन्दगी अका-रथ है। थोड़ी देर में नाव बीच मझधार में पहुंच गयी। सावनी पुरवैया जोरों से लहर मार रही थी। तभी अचानक अन्धड़-तूफान उठ गया। नाव डग-

मगाने लगी। पंडी जी डर के मारे कांपने लगे। तभी मल्लाह ने पूछा—बाबा, तरना जानते हैं? पंडी जी ने जवाब दिया—नहीं, बच्चा! तब मल्लाह फिर बोला—मेरी तो जिन्दगी चौदह आने ही अकारथ है, आपकी तो सोलहो आने अकारथ है। यह कहते हुए मल्लाह तैरकर उस पार निकल गया और पंडी जी पोथी और नाव सहित बीच पानी में बैठ गए।

पता नहीं, जमुना सिंह ने उसे जवाब देने की बजाय चुप्पी क्यों साध ली है। शायद, नसें गुस्से से तनती जा रही हैं। उसने चलते-चलते इतना ही कहा, "अकिल-ज्ञान की बात तो पीछे है दुखित राम, अपनी अगिनिया को जरा संभाल में रखना। युग-जमाने का कोई भरोसा नहीं है। तुम्हारे टोले की पहचान भी हमारे ही गांव से होती है। सबकी इज्जत एक-दूसरे से जुड़ी हुई है। कहीं ऐसा न हो कि हमारी नाक एक ही साथ कट जाय।"

"ध्यान है मालिक। एक महीने में पाहुन के आते ही अगिनियां को पठा दूंगा। क्या करूं, भागकर चली आई तो। आखिर बेटी है। ममता ने रोक लिया, नहीं तो उसी समय पाहुन के पीछे लगा देता कि अपनी अमानत साथ लेता जा।"

"जो कहो दुखित राम।" जमुनासिंह कहता है, "बेटी जाति को ऐसी शोखी शोभा नहीं देती।"

"मालिक की बात।" दुखित हंसते हुए जवाब देता है, "हमारे समाज में यही तो एक छूट है कि चाहे लड़की विधवा हो चाहे पति के द्वारा छोड़ दी गयी हो किसी भी हालत में दूसरा विवाह करने की उसे छूट है। आप लोगों की तरह यह सब लड़कियों के लिए वर्जित होता तब तो हमारी लड़कियों के लिए इस धरती पर इज्जत बचाना और भी मुश्किल रहता।"

दुखित ने इस जवाब से स्वयं महसूस किया कि गरीब की खिल्ली उड़ाने की लोगों की आदत है। जमुना सिंह को चिन्ता अपनी भतीजी सोनिया के लिए क्यों नहीं हुई जो शादी के छः महीने बाद ही विधवा हो गयी थी और इसके डेढ़-दो साल बाद ही मोतिया हरवाह के साथ जो भागकर गयी सो आज तक नहीं लौटी। लोगों ने प्रचार कर दिया कि सोनिया अपने मामा

के घर रहेगी। और मोतिया को कहीं डाकुओं ने मारकर फेंक दिया है। मगर सच्ची वात दब भले जाती हो, मगर गलत कभी नहीं हो सकती। मोती कलकत्ता चटकल में है और सोनिया से उसे दो लड़के भी हैं। घर पर गुप-चुप रुपये-पैसे भेजवाता रहता है। धीरे-धीरे गांव के लोग भी जानने लग गए हैं। हमारी वेटियों को तो कहने की इतनी ताकत है कि अमुक आदमी मेरा पति है, मगर सोनिया या उसके वाप को तो यह भी साहस नहीं है। यह कहकर भले संतोष कर लें कि गरीब लोगों में यह सब चलता है, क्योंकि परमात्मा के ये असल वेटे नहीं हैं। मगर अपने भीतर के जुल्म, क्रूरता और ऐब को कहां दवा पाते हैं। वह तो एक न एक दिन घाव की तरह वहने ही लगता है।

अरहर की खेती इस साल अच्छी हुई है। फलियां दानेदार होने लगी हैं। दुखित अचानक एक फली तोड़कर देखता है। जमुना सिंह दूर से ही देखकर फिर चिल्लाता है, "क्या कर रहा है रे, दुखिता वहां ?"

"कुछ नहीं मालिक। अरहर की खेती इस साल वहुत अच्छी है।"

"अरहर की खेती से तुम्हारे वाप को क्या ?"

दुखित सुनते ही कटकर रह गया। वात तो जमुना सिंह ने ठीक ही कही है कि अरहर की खेती अच्छी है तो दुखित के वाप का क्या ? वह वहां से जल्दी-जल्दी भागता है जैसे चोरी करते हुए सेंध पर ही वह देख लिया गया हो। दूसरों की लहलहाती खेती देखकर तरसना भी तो एक प्रकार की चोरी ही है। आज मन ललच-ललच गया है। कल चोरी करने की हो सकती है। और परसों लूट, मार-पीट, हिंसा—

घर पर लौटकर वह नाद के पास ठीक से खड़ा भी नहीं हो पाया है कि अगिन की मतारी पूछ वैठती है, "गांव में वड़े जोर का हल्ला है।'

"क्या हल्ला है ?" दुखित झल्ला जाता है।

"अगिनिया के वारे में।"

"क्या अगिनिया के वारे में ?"

वह नाद के वहुत करीव उसकी पीठ के पीछे खड़ी होकर फुसफुसाती

है, "यही अगिनिया और ममदुवा के बारे में पूरा गांव गरम है ।"

"किसी ने कुछ देखा है ?"

"यह कौन बताएगा ? मगर बतियाते हुए तो कई लोगों ने देखा है ।"

"सभी साले झूठे हैं । उनकी बहू-बेटी किसी से नहीं बतियाती क्या ? मैंने अब सोच लिया है, जब तक अगिनिया की इच्छा होगी वह इसी गांव में रहेगी । ससुरों के मुंह आप ही थककर चुप लगा जाएंगे । तू जानती नहीं, गरीब को लूटने के रास्ते बहुत होते हैं ।"

"मैंने जो भी सुना उसे बता देना ठीक था न ?"

"अगिनिया कहां है ?" दुखित नाद से उतर जाता है ।

"अभी तो यहीं थी । गयी होगी पड़ोस में कहीं । कुछ खाओगे नहीं ?"

दुखित गुस्से से उबलने लगा है । "खाने के लिए क्या है ?"

"मक्के की रोटी है ।"

"अभी आता हूं ।"

दुखित इधर-उधर आंखें नचाता हुआ चमटोली के बाहर आकर खड़ा हो गया है । चमटोली से एक डगर सीधे सिरीटोला जाती है । दोनों टोले के बच्चे औरतें बीच में जमा हैं । कोई तमाशा वाला है । वह तमाशा वाला एक बसहा बैल का मालिक है । बसहा बैल से जो पूछो वही बताता है । एक तरफ अगिन भी भीड़ में खड़ी है । सवाल तो उसके भी मन में है । एक तो ऐसे ही जगहंसाई हो रही है । सवाल जानने पर तो लोग और न जानें क्या-क्या कहने लगेंगे । लोग कहते हैं, शिव बाबा अपने बसहा बैल को बहुत प्यार करते हैं । जिस बैल की गर्दन पर पतला-सा जन्मकाल से ही थैला निकला होता है वही शिवजी का बसहा बैल है । शिवजी इस बसहा बैल पर सवार होकर पार्वती से ब्याह करने के लिए गए थे । बसहा बैल को देखते ही कन्याएं अपने सुहाग की कल्पनाओं से झूमने लगती हैं । अगिन के होंठ उल्लास में अनायास ही फुसफुसा उठते हैं—"बसहा बैल चढ़ि अइले महादेव—।"

माथे पर पगड़ी और एक सौ ग्यारह तिलक छापवाला आदमी असल

में ब्राह्मण भी नहीं है मगर वह ब्राह्मण के भेष न रखे तो कोई गांव में घुसने भी नहीं दे। सभी उसे पंडी जी कहकर बुलाते हैं और वह मुस्कराकर जवाब देता जाता है। अगिन के मुंह से कई बार शब्द निकलकर हवा में बिखर जाते हैं, "पंडी जी, मेरे मन की बात नहीं पूछवा दीजिएगा ?"

"तुम्हारे मन में क्या है, बिटिया ?"

"मैं ही बता दूं तो बसहा बैल क्या बताएंगे ?"

बसहा बैल का मालिक उसकी नादानी पर हंसता है। "शिवजी तो यही बताएंगे कि तुम्हारी इच्छा पूरी होगी या नहीं !"

"पूछवा दीजिए न, कि मेरी इच्छा पूरी होगी कि नहीं ?"

"अच्छा बेटा, धीरे से मेरे कान में अपना नाम बता दे।"

अगिन उसके कानों के पास मुंह ले जाकर अपना नाम बताती है।

वह बैल का माथा सहलाता है और पुचकारते हुए पूछता है, "बताओ, इस भीड़ में खड़ी कन्याओं में अगिन देवी कौन है ?"

बसहा बैल गोलाकार भीड़ के अन्दर से दो-तीन बार चक्कर लगाता है। फिर वह सहमता-सहमता अगिन के सामने आकर खड़ा हो जाता है। और सिर हिलाते हुए अगिन का आंचल थुथून से पकड़ लेता है।

बसहा का मालिक जोर से आवाज लगाता है। "एक बार बच्चों जोर से तालियां बजा दो।"

लड़के किलकारियां भरते जोर-जोर से तालियां बजाते हैं।

"अगिन देवी के मन में कुछ है ?"

बसहा स्वीकारोक्ति में थुथून हिलाता है।

"मन में जो इच्छा है वह पूरी हो जाएगी ?"

बसहा पुनः स्वीकारोक्ति में थुथून हिलाता है।

बसहा का मालिक बड़े गर्व से कहता है। "शिव बाबा तुम्हारी मनोकामना पूरी करेंगे बचिया। जाओ, घर से बाबा के लिए अन्न-पानी ला दो।"

दुखित तब से खड़ा-खड़ा तमाशा देखता है। उसे देखने के पहले

उसकी नजर ममदू पर पड़ती है। वह वहीं से चिल्लाता है, "तुम्हें घर जाना चाहिए तो यहां खड़ी-खड़ी क्या कर रही है रे अगिनिया ? लड़की ही बुढ़ापे में भी सताती है क्या रे ?"

अगिन वहां से खरहे की तरह भागती है।

दुखित अंगोछे से चना खोलकर बसहा की ओर बढ़ाना चाहता है। तभी मालिक टोकता है, "शिव बाबा जूठन ग्रहण नहीं कर सकते, बच्चा।"

"घर से अनाज ला देता हूं, बाबा।" मगर घर में अन्न का कोई दाना होगा तब न ? यही सोचता हुआ दुखित लज्जित और उदास दरवाजे की ओर बढ़ता आ रहा है। दरवाजे पर झूलती हुई अगिनिया को देखकर ऐंठता है, "शिव बाबा को कुछ अनाज-पानी देगी या मंगनी में मनोकामना पूछती फिरेगी ?"

"कोई अनाज नहीं है, बाबू।"

"तब क्या कहेंगे, शिव बाबा !" थोड़ी देर तक सोचता है। "जरा ठहर मरछिया काकी से कुछ मांगता हूं।"

दरवाजे पर सोहराई भगत चिलम सुलगा रहे थे।

"काका, अन्दर काकी है ?"

"क्या बात है, दुखित भगत।"

"पाव भर कोई अनाज उधार में चाहिए।"

"किसलिए ?"

"बसहा बाबा के लिए। अगिनिया ने कोई मनोकामना पूछी थी।"

सोहराई तपाक से बोलता है, "अगिनिया जैसी लड़की को सहेजकर रखो, बबुआ।"

अगिन की मतारी वहीं से हांक पारती है, "अजी सुनते हो, मेरे पास दस पैसे थे।"

"ला, मैं दौड़कर दे आता हूं।"

वह बसहा बैल हांकते हुए गनपतटोला की ओर बढ़ गया है। लड़के पीछे-पीछे दौड़ रहे हैं। बैल की अनेक घंटियां टुनटुना रही हैं। उसके खुर

से डगर की धूल हवा में फैलती जा रही है। ऊपर से लड़कों के दौड़ने से धूल और भी घनी होती जा रही है। दुखित उड़ती हुई धूल को चीरते हुए आगे से दौड़कर खड़ा हो जाता है। "यह दक्षिणा स्वीकार कीजिए, बाबा। घर में अन्न का एक दाना भी नहीं था।"

बैल के मालिक को संभवतः दया आ जाती है। वह उसके दस पैसे के सिक्के को स्वीकार कर लेता है।

दुखित को सोहराई भगत बिल्कुल अच्छा आदमी नहीं जंचता। रात-दिन भगत दूसरों की चिन्ता से मरा जा रहा है। उसकी बड़ी बेटी को बिसुनपुर के बाबू ने खुलेआम रख लिया तो क्या बिगाड़ दिया भगत ने उसका? जबसे गयी है झांकने के लिए भी गनपतटोला नहीं आई है। उसी भगत को सभी के सभी बुरे और बदचलन ही दिखलायी पड़ते हैं। वह शुरू से ही ईर्ष्यालु आदमी है। जैसा अपने है वैसी ही उसकी मेहरारू मरछिया काकी भी है। रात-दिन दोनों बेकत दूसरों की शिकवा-शिकायत में ही रहते हैं। इसीलिए तो भगत को लगातार सात बेटियां ही हुई हैं। बेटे की उम्मीद में काकी खाली बेटियां ही जनमती चली गयी है।

भगत तो अपने मुंह मियां मिट्ठू बना फिरता है। पूरी चमटोली को भ्रम में डाले रहता है कि उसका जनम भूल से चमार के घर में हो गया है। ब्रह्मा जी ऐसा बिल्कुल नहीं चाहते थे। इसीलिए तो उसकी सारी आदतें ब्राह्मण की हैं। सारा गांव उसे इन्हीं सब कारणों से भगत कहता है। यहां तक कि उसकी मेहरारू मरछिया काकी की भविष्यवाणियां सारा जवार-पथार मानता है। जिस साल बाढ़ या वर्षा जमकर होती है उस साल मरछिया काकी दो महीने पहले ही भविष्यवाणी कर देती है। ऐसी असर-दार मरछिया काकी को जन्मना चमाइन की कोई कल्पना कर सकता है? बबुआन पंडित से लेकर कहार-कुर्मी तक—सभी मरछिया काकी की जिह्वा का असर मानते हैं। जब जवार-पथार, पानी-वर्षा के बिना हहाकारने लगता है तब लोग मरछिया काकी को घेर लेते हैं—काकी, वर्षा नहीं हुई तो अकाल पड़ेगा। पानी मंगा दो, काकी! मंगा दो! उसके बाद तो काकी

आन टोले में जब तक दो-चार बात इधर से उधर नहीं कर ले तब तक उसके पेट का पानी ही नहीं पचे। जमुना सिंह को भगत अच्छा लगता है। मगर दुखित को तो फूटी आंखों भी नहीं सुहाता।

सोहराई भगत अपना गुन किसी को क्यों नहीं बताता? बेटा भी तो नहीं है कि उसे ही बताकर मरता। मरने के साथ अर्थी पर ही ले जाएगा क्या? गजब का चोन्हर आदमी है। दुखित ने कोशिश की थी, भगत उसे बरखावाला अर्जा समझा दे। मगर सभी समझते हैं, भगत जमुना सिंह को बता सकता है, मगर अपने टोले के किसी आदमी को नहीं। दुखित को भारी गुस्सा चढ़ा हुआ है। वह भगत की एक दिन बांह पकड़ लेता है, "बामन की तरह कंठी-तिलक लगाने वाले सभी ढोंगी हैं। तुम भी कम नहीं हो। मेरी बेटी सतभतरी है। मगर तुम्हें क्या अधिकार है खिल्ली उड़ाने का? फिर अगर कभी मेरे परिवार के किसी की चर्चा की तो बांह उखाड़ लूंगा।"

टोले में इसी पर हंगामा हो गया है। भगत से इस तरह बोलने वाला दुखित पहला आदमी है। जगपत बाबा ब्राह्ममुहूर्त में गलियों से गुजरते हुए रामनाम की जगह यही बकते जा रहे हैं, "हे परमात्मा! धरती पर काफी लोग बढ़ गए हैं। अब पापी उस कगार तक पहुंच गए हैं जहां से सत्यानाश जरूरी है। कलियुग सीमा पार कर रहा है। सोहराई भगत को दुखिता गलिया सकता है। इससे बड़ा अनर्थ और क्या होगा? उसने बांह उखाड़ने के लिए कहा तो समझो उखाड़ ही दिया। बेटी को मुसलमान के लिए छोड़ दिया है। अब धरम-करम कैसे चलेगा हे भगवान!"

जगपत बाबा की जबान और खड़ाऊं की आवाज में बड़ी समानता है। कुछ भी बोलते हैं तो टोले वाले डर जाते हैं। धीरे-धीरे ऐसी घटनाएं दुखित को मजबूत ही बनाती जा रही हैं। यह भी संयोग की ही बात थी कि जब मझिआंव से उसका पाहुन उसे लेने के लिए आया तो अगिन बुखार में डूबी हुई थी। दुखित ने उसे समझा-बुझाकर विदा कर दिया कि बुखार उतरते ही अगिन को मझिआंव पहुंचा देगा। मगर रामरतन किसी भी हालत में मानने के लिए तैयार नहीं था। वह अपने गांव के आस-पास

के दो लोगों को पंचइती के लिए भी ले आया था। यह वात दुखित को पसन्द नहीं थी। रामरतन गांव से सोचकर चला था कि इस वार कुछ न कुछ फैसला करके ही लौटेगा। मगर मन में यह भी वात थी कि अगर इस वार मेहरारू को लाने से चूक गया तो जिन्दगी में फिर वंश का मुंह कभी नहीं देखेगा। गिरती हुई उमिर है। अव अपनी वेटी देने के लिए कौन तैयार हो सकता है। परन्तु वात इतनी वढ़ गयी कि रामरतन भी सीमा से वाहर हो गया था। टोले से भी रामरतन दो-चार लोगों को वुला ले आया था। सोहराई भगत भी आया था। उसने दुखित को समझाने की कोशिश की, "अगिनिया को जैसे भी हो पाहुन के हवाले कर दो। वैलगाड़ी ले ही आए हैं। वहां कस कर दवा-दारू करेंगे, अगिनिया ठीक हो जायेगी, परायी वेटी पर हमारा अधिकार ही क्या है।"

भगत आंगन में वैठकर दुखित वहू को समझा रहा था, तभी अगिन घर से आंगन में निकल आयी और वोली, "मैं फैसला कर चुकी हूं काका, मझिआंव किसी भी हालत में नहीं जाऊंगी।

मरछिया काकी उसी वक्त यह खवर सारे गांव में फैला आयी—अगिनिया कैसी आफत मेहरारू है रे रामजी ! साफे कह देती है कि पाहुन नामर्द है। गनेसटोला में ही बूढ़ी होकर मर जाएगी। मगर वुढऊ भतार के साथ कभी नहीं जाएगी। भरसक धरती पर अकाल नहीं पड़ता है और इन्द्रासन भी मेरे गिड़गिड़ाने के वाद भी नहीं डोलता है। अगिनिया की वजह से मेरा भी सत खराव हो गया है। ऐसी वेटी को तो घठिया कर गंगा में वहा देना चाहिए। न रहेगा वांस, न वजेगी वांसुरी।

भगत तो उसी क्षण अगिनिया का जवाव सुनते ही आंगन से उठ गया था। मरद के सामने जो औरत इतनी निर्लज वन जाय उस मरद का समाज के सामने मुंह ही क्या रह जाता है। एक तरह से भगत ने भी रामरतन को उभार दिया था, जो अनाप-शनाप भी वोलने लगा था। दुखित भी अपना कलेजा कड़ा ही कर चुका था। आवेश में रामरतन को यहां तक वोल गया —"मेरी वेटी मझिआंव जाना नहीं चाहती तो मैं उसे अपनी वरावरी के

मरद के साथ भेज कर पाप का भागीदार नहीं बनूंगा।"

"ब्याहने के पहले क्या आंख में माड़ी पड़ गयी थी कि इस बूढ़े को पसन्द कर अपनी बेटी देने के लिए दरवाजे पर आये थे?" रामरतन ने माकूल जवाब दिया था। दुखित को यह जवाब भाले की तरह चुभा था। मगर कई तरह की कमजोरियां समझकर खून का घूंट निगल गया था। दोपहर तक काफी तनावपूर्ण स्थिति रही। फिर रामरतन खुद ही उठकर चल दिया। और चलते-चलते एक भारी गाली देता गया, "रखो बेटी को अचार डालने के लिए। मगर मैं भी इसे उठवा कर नहीं ले गया तो असल बाप का बेटा नहीं।"

खाट पर ही पड़ी-पड़ी अगिन ठठाकर हंसती है। "यह मरद का बच्चा मुझे क्या उठाकर ले जाएगा। मरद का बच्चा भी हो तो तब न? वह साला मुझे उठाकर ले जाने लायक रहता तब तो मैं ही स्वयं उसकी गोद में बैठकर जाती।"

माई को संदेह होता है, अगिनिया बड़बड़ा रही है। ज्यादा बुखार चढ़ता तो नहीं जा रहा है। वह दुखित को बुलाने के लिए जाती है। दुखित खुद बहुत परेशान है। वह झुंझलाकर कहता है, "मर जाने दे ससुरी को। ऐसी बेटी मर जाय यही अच्छा है। गांव तो गांव—बाहर वाले भी मेरा मजाक मेरे मुंह पर उड़ाकर चले जाते हैं।"

माई दुखित की बातों की परवाह नहीं करती। उस ओर ध्यान न देकर फिर कहती है, "जगपत बाबा को बुलाओगे नहीं, देख लेते कि इसे भूत-प्रेत तो नहीं है। भूत-प्रेत है तभी इतना बड़बड़ाती या जिस-तिस को निर्लज्ज की तरह जवाब दे देती है।"

"मेरे सामने जगपत बाबा ओर सोहराई भगत का नाम मत लो।"

"तब क्या करोगे, बेटी को जान-बूझकर मार डालोगे?"

"अगल-बगल अस्पताल होता तो वहां फेंक आता।" दुखित कुछ-कुछ शिथिल पड़ता जा रहा है। "हंसने वाले तो दो तरफ से हंसते रहते हैं। इन की परवाह करने की जरूरत नहीं है। छोटकी पाठी बेंचकर कहीं से रुपए

ले आओ। गजाधर लाल डागडर के यहां ले चलते हैं। यह ससुरा बगैर पैसे के तो कुछ सुनता ही नहीं है।"

अगिन स्वयं अचरज में है। इस वार मझिआंव से भागकर आने के बाद मतारी की ममता गजब छलछलायी है। पहले तो यह भी टोला-पड़ोस के साथ मिल-जुलकर सरापती रहती थी। इसे धरमपुर में कटनी के दिन अच्छी तरह याद हैं। माई के सौतेले व्यवहार से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। वेटी चाहे काली-कलूटी हो चाहे गोरी-चिट्टी, आखिर मतारी-वाप के लिए वेटी ही है। वैसे तो तमाम गरीव के वाल-वच्चे टीले-पत्थर की तरह फलते-फूलते रहते हैं। अगिन भी कहीं झाड़-झंखाड़ की तरह निकल आयी है। एक भाई भी है तो जव तव ही मतारी-वाप की सुधि लेता है। कभी मन में आया तो दस-पांच किसी के हाथ से भेजवा देता है। परन्तु दिनेसर भइया सात-आठ साल हुए, कलकत्ता से कहां लौटे हैं। मेहरारू लेकर गये तो उधर ही वस गए हैं। भाई के वदले अगिन के साथ ममेरा भाई मझिआंव बैलगाड़ी के साथ गया था। आज अगिन को दिनेसर भाई की याद बहुत आ रही है। वावू से चर्चा चलाने पर या तो नाराज हो जाते हैं या डबडबा-डबडबाकर रोने लगते हैं। वावू के लिए उसे बहुत मोह आ रहा है। मरते दम तक इनके भाग्य में इसी तरह करम कूटना लिखा हुआ है।

वावू को असमंजस में देखकर अगिन मोहा जाती है और रोने लगती है। दुखित घवड़ाता है, अगिनिया को कोई भीतरी तकलीफ है। पूछता है, "विटिया! वड़ी तकलीफ है न!"

वह भी लोर पोंछने लगता है।

"नहीं, वावू!" अगिन समझाती है, 'खाली बुखार के लिए इतना घवड़ा गये हो? बुखार तो चढ़ता-उतरता रहता है। मैं जल्दी ठीक हो जाऊंगी। पाठी मत वेचो वावू, मत वेचो!"

"इसी समय दिनेसरा की याद सताती है रे अगिनिया।" दुखित फूट-फूटकर रोने लगता है। अगिन की रुलाई और भी तेज हो जाती है। माई भी सिसकने लगती है।

एक विवश, असहाय और सब कुछ हारे हुए परिवार की यही स्थिति है। जब चारों ओर अंधेरा डरावना लगने लगता है तो बैठकर इसी तरह दिशाहीन रोते रहते हैं।

डाक्टर गजाधर लाल ने पाठी रख ली है और बदले में अगिनिया की दवा करने के लिए राजी हो गया है। अगिन सोचती रहती है, हत्यारा गजाधर लाल दो ही चार दिन में पाठी को मारकर खा जाएगा। वह तो आदमी को खा सकता है, बकरी उसके लिए क्या है!

अगिन लगभग एक पखवारे के बाद बीमारी से उठी है। जमुनिया रंग वाली अगिन को जब भी फरीदा दी देखने के लिए आती तब यही कहती, खुदा ने तो अपने हाथों अगिनिया को कृष्ण जैसा मोहिनी मूरत बनाया है। दुखित भाई की तकलीफ हरने के लिए पैदा हुई है। जब तक हर नहीं लेती तब तक मरेगी नहीं। उसकी माई से कहती, "भौजी! अगिनिया के सेवा-खरच में कोई कमी हो तो मैं इसे बेटी बनाकर रखूंगी।"

"ले जा दीदी," माई हंसती हुई बोलती, "लोग ममदुआ को लगा-लगा कर तरह-तरह की बातें बोलते रहते हैं।"

"कलमुंहों को पिल्लू पड़ जाय।" फरीदा चिल्लाती, "खुदा गवाह है, जितनी पाक और साफ हमारी अगिन है, उतना ही पाक मेरा ममदू है। गरीब का आपस में हंसना-बोलना भी गांव-घर नहीं देख सकता। कलमुंहे हमारी सारी बकरियां चुरा-चुराकर खा गए हैं। ममदुवा को यहां कोई काम देने के लिए भी तैयार नहीं होता। कोई-कोई दिन तो ममदू भी पेट बांधकर सो रहता है। मगर बेटा इतना शान्त है कि किसी के सामने हाथ तक नहीं पसारता। उसे ये गरीबों के दुश्मन रात-दिन चोर-उचक्का कहकर गालियाने से बाज नहीं आते। जैसे उनके बाप का खाता हो।"

"हमारे साथ धान की कटनी में दक्खिन में काहे नहीं चलती? दो-तीन मन धान मजूरी में मिल जाय तो माई-बेटा के लिए बहुत है। वहां तो दुश्मनों की नजर से कुछ दिनों तक बचा रहेगा ममदुवा।"

"ठीक राय देती हो, भौजी!"

लोग ममदू के पीछे पुलिस को उकसाए रहते हैं, जैसे इलाके में सबसे बड़ा अपराधी हो। उस साल जब भुखमरी थी तो जमुना सिंह की ड्योढ़ी में औरों की तरह ममदू भी घुसा था। परन्तु गनपतटोला से अकेला ममदू का ही नाम थाने में दर्ज था। तब से हर घटना के लिए थाने की ओर से ममदू की ही खोज होती थी। भागते-फिरने के लिए ममदू विवश था।

कई-कई रात तक ममदू अरहर के खेतों में ही रह जाता है। दुश्मन लोग हल्ला उड़ाते रहते हैं, अगिनिया को लेकर ममदुवा रात भर अरहर के खेतों में पड़ा रहता है। अरहर की खेती इतनी सघन होती है कि जंगल की तरह पसर जाती है।

इस साल तो गंगिया माई सब कुछ बहाकर ले गयी हैं—मकई और अरहर सब कुछ। इस बार लगता है, गनपत टोला और सिरीटोला पूरा का पूरा दक्खिन की ओर मजूरी की खोज में निकल जाएगा।

अगिन दोनों माई-बेटी के अलावे, फरीदा और ममदू भी झुंड के झुंड गांव छोड़कर दक्खिन की ओर गुजरते हुए काफिला में शामिल हो गए हैं।

टोले की स्थिति दिन प्रति दिन श्मशान की तरह भयावह होती जा रही है।

कोई ठीक-ठीक नहीं बता सकता, वे गांव कब तक लौटकर आ रहे हैं। गंगा मइया की माया में किसे लौटकर आने की स्मृति रह जाएगी!

ऐसा लग रहा है जैसे सिरीटोला और गनपतटोला में लोग एक दिन में हैजा-प्लेग की बीमारी में चल बसे हैं—एकदम उजास और श्मशान की की तरह खाली पड़ गया है। इस साल बाढ़ की तबाही ने गांव के अधिकांश लोगों को इधर-उधर भागने के लिए विवश कर दिया है।

अभी सूरज का आकाश में कहीं नामों-निशान तक नहीं है तभी लोग—

गांव से तीन-चार मील दूर निकल आए हैं। बहुत तो इस निश्चय से निकले हैं कि गांव फिर लौटकर नहीं आएंगे। उनके साथ उनकी पूरी गृहस्थी और सम्पूर्ण संसार है—औरत, बच्चे, पाड़ी, बकरियां, कपड़ा-लत्ता सब कुछ। घर-दुआर तो गंगाजी की पेटी में चला गया है, अब रहने-बसने के लिए जमीन ही कहां है।

बिहार का सबसे बड़ा इलाका गंगा के मैदान में फैला हुआ है और वर्षों से इलाके के लोग भारी बाढ़ तले कराहते रहे हैं—जमाने से इसका कोप एक नियमित विशेषता बनी हुई है। शक्तिशाली हिमालय से निकलकर हजारों किलोमीटर की यात्रा तय करती हुई गंगा बिहार में भोजपुर जिले के चौसा के पास प्रविष्ट होती है और चार सौ अड़तीस किलोमीटर का लम्बा मार्ग तय करती हुई आखिर में संथाल परगना के राजमहल के पास फरक्का बांध के माध्यम से बंगाल में पहुंचती है। इसके दक्षिणी किनारे पर जहां बक्सर, आरा, पटना, मुंगेर सुलतानगंज, भागलपुर और राजमहल जैसे शहर हैं वहीं उत्तरी किनार पर छपरा, हाजीपुर, बेगूसराय और खगड़िया भी है। बिहार में गंगा का पूरा जलग्रहण-क्षेत्र 1.44 लाख वर्ग कि० मी० से अधिक में फैला है। अचरज की बात तो यही है कि गंगा में पानी अप्रैल से सितम्बर के बीच नौ-दस मीटर बढ़ता है। नतीजा यह होता है कि 22 करोड़ के लगभग लोग बाढ़ की विनाशकारी लीला के चपेट में जाते हैं।

जगपत बाबा का बेटा महेन्द्र पांडे सरकार में इंजीनियर है। वही गांव में जब-तब आकर बताता है कि नेपाल से बहुत सारी पागल नदियां निकली हुई हैं जो हमारे यहां की तबाही में हिस्सेदार बन जाती हैं। नदी-तलों में भारी तलछट का जमाव होता है। गंगा हिमालय के चट्टानी कणों से बराबर भरती जा रही है। ऊपर से उत्तरी भारत और बिहार के दक्षिणी हिस्सों से इसमें बहकर आने वाले बालू और गाद भी बहुत ज्यादा होते हैं। इसी गाद की वजह से गंगा की शाखा नदियों महानन्दा, कोशी, कमला, बागमती, अधवारा के तल ऊंचे होते जा रहे हैं। पेड़ों का कटना भी बहुत बड़ा कारण

हैं, अन्तहीन ! दिशाहीन !!

बीस-पचास के झुंड जहां-तहां विखरते जा रहे हैं, गांवों के किनारे अथवा बगीचों में। बाकी तो चलते जा रहे हैं, पता नहीं कहां ? अगिन और ममदू के परिवार बीस-पच्चीस कोस से भी ज्यादा निकल आए हैं। मन और होंठों पर सभी के फुसफुसाहट है—आखिर हम कहां जा रहे हैं! बाढ़ का पानी जितनी ही तेजी से फैलता है हवा उतनी ही तेजी से गुम और उमस से भरती जाती है। जैसे हवा कहीं चुपचाप जाकर कैद हो गयी हो। गर्मी और ऊब से आसपास का वातावरण आत्महन्ता की तरह' डरावना लगता है। ठीक इसी प्रकार की चुप्पी, ऊब और बेचैनी इन बनजारों जैसी जिन्दगी जीने के लिए विवश लोगों की भी है। दाऊद सिरीटोला का बडा मजाकिया आदमी है। वही जब-तब कुछ न कुछ हंस-बोलकर लोगों को गुद-गुदाने की कोशिश करता रहता है। मगर बहुत कम ही लोग हंस पाते हैं। कोई-कोई हंसी तो भीतर से उठकर होंठों के पास तक भी नहीं पहुंच पाती है। दाऊद मियां जोर से पूछता है, "हम किस मेले में बिकने के लिए जा रहे हैं, दुखित भइया ? वह मेला कितने कोस में लगता है ?"

बेचारा दुखित तो पहले ही से ऊबा और खीझा हुआ है। भूख-प्यास को दबाने से शायद इसी तरह आदमी चिल्लाकर बोलता है। "क्या बेमतलब बकता रहता है, ससुरा ?"

मगर दाऊद हंस देता है—"तब हम बैलों की तरह झूमते हुए कहां चले जा रहे हैं ? हमें कौन हांककर ले जा रहा है। किस मेले में बेचने के लिए ले जा रहा है।"

यह तो दुखित को भी नहीं मालूम कि उन्हें हांककर कौन ले जा रहा है या गोशाले से पगहा-खूंटा तोड़कर खुद भागे चले जा रहे हैं, कसाईखाने की ओर। तब दाऊद मियां गलत कहां बोल रहा है। यह सवाल ठीक ही तो है, हम कहां जा रहे हैं। उसके पांव बन्दी से भी ज्यादा अवश होते जा रहे हैं। यह प्रश्न उसके पांव को और भी सख्ती से कसते जा रहे हैं। दुखित पागलों की तरह नाचने लगता है। वह अपनी चिन्ह-पहचान के लोगों को

दौड़कर आगे से घेरता है और बेतहाशा चीखते हुए पूछता है, "भाई रे ! आखिर हम कहां जा रहे हैं—धरमपुरा, करमपुरा, बनास के पार या इस जिले से बाहर—कहां ?"

बहुत थोड़े लोग उसकी चिल्लाहट पर रुकते हैं। बाकी सभी उसे दर-किनार करते, धसोड़ते आगे बढ़ते जा रहे हैं, जैसे बहरे और अंधे हों ! "काका, यह इलाका डकैतों का है। हम यहां नहीं रुक सकते।" ममदू उसे पकड़कर जोर से झकझोरता है।

"हमारे पास माल-पानी हो तभी तो हम भय भी करें। अब आगे चलना ठीक नहीं है।"

"मेरी बात मानो काका, आगे जो भी बाग-बगीचा दीखेगा, हम वहीं रुक जाएंगे।"

दुखित कुछ बोलता नहीं। ममदू के पीछे-पीछे बढ़ता जा रहा है। वह किटकिटाकर बोलता है, "देख ममदुवा ! मैं नहीं तू चल रहा समझ ले ! मेरे पांव वश में नहीं रह गए हैं।"

"घबड़ाओ नहीं काका, मैं तुम्हें कंधे पर उठा लूंगा।"

अचानक दिनेसरा का ध्यान हो आता है। नाम के लिए बेटा है, मगर किस काम का है। साला मेहरारू लेकर जब से गया तब से गांव पर आने की बात तो दूर रही कोई चिट्ठी-पत्री भी नहीं लिखी। दिनेसरा आज रहता तो जन्मभूमि त्याग कर रोजी-रोटी की तलाश में इधर-उधर नहीं न भटकना पड़ता। ठीक ही कहती है मुशम्मात फरीदा, गरीब का बेटा ही तो उसकी पूंजी है। दुखित की असली पूंजी ही लापता है, जीने से क्या फायदा है। मर-मरकर जीना भी कोई जीना होता है ?

ममदू की बात पर उसे प्यार उमड़ आता है। कितना अच्छा था कि दिनेसरा के बदले में ममदुवा ही उसका रहता। ऐसे दिलेर बेटे से किसी भी बाप को धोखा नहीं होता। ममदू ही रास्ता काटने के लिए बात चलाता है। "मैं तो सिरीटोला छोड़कर बहुत खुश हूं काका।"

"काहे रे !"

"गांव में कुछ भी घटना हो, ममदुवा का उसमें हाथ है। उस साल सुखाड़ में जमुना सिंह की ड्योढ़ी लूटी गयी, ममदुवा उसका नेता है। तब से पुलिस हर बात के लिए मुझे ही पकड़ने के लिए दौड़ती है। गांव-जवार का मैं सबसे बड़ा गुंडा, बदमाश, चोर, डाकू, मां-बहन पर बुरी नजर डालने वाला आदमी हूं। ऐसी हालत में उस जन्मभूमि से नाता टूट ही जाय तो अच्छा है न काका।"

इस समय दुखित काका का सारा जवाब हवा की तरह गुम है।

फिर वे चुपचाप चलते जा रहे हैं। ममदू की गुनगुनाहट ऊमस भरे वातावरण में सूई की तरह चुभती रहती है। अचानक ममदू के कंठ से सुर जोरों से फूटकर वातावरण में फैलने लगते हैं —

"राम गइले बनवा, बिलखे लागल जनवा हो
माई भुई रोवे फुंका फाड़
आजु राम तजि-तजि चली भइले बनवा हो
तबो नाहि डोलेला पहाड़
भरि-भरि अंखिया सुरतिया में नाचेला
गंगा मइया तोहरी अरार
कवना कसूरवा में तजि देलु माई मोरि
अपनि अचरवा के हार।"

ममदू की डबडबायी आंखों से दो-तीन बूंद लोर लुढ़क आते हैं। अगिन उसे देख लेती है। मगर पलकें नीचे की ओर झुकाए बकरी को खींचती जा रही है। युवकों की टोली ममदू के आगे-पीछे फैलती जा रही है।

"सुना ना, ममदू राजा एकाध टप्पा और !" जगेसर कहता है, "बड़ा अच्छा लग रहा है।"

ममदू अपनी आंखें अंगोछे से पोंछ लेता है।

आगे-आगे बैलगाड़ी सरकती जा रही है। गाड़ी पर किसी दूसरे गांव के लोग हैं। अल्हड़ युवतियां ममदू के गीत पर हंसती हैं। युवकों का ठठोली

करने का जी चाह रहा है। जगेसर का मुझाया मन उनकी हंसी-ठिठोली पर ही खिल उठता है और वह अनायास ही गा उठता है :

'कारि-कारि केसिया के घटवा बनाके
विहंसि-विहंसि बिजरी चमकाके
हरलू मनवां मोर
संवरिया
काहे तू देलु संग छोड़..."

एक साथ कई जवान टिहुक उठते हैं—'जीव रे जवान, जीव !'

रात चढ़ने लगी है। ठीक इसी रफ्तार से भूख-प्यास भी बढ़ने लगी है।

वे जिस गांव के सामने रुके हैं उसके करीब ही चार-पांच एकड़ की की एक ऊबड़-खावड़ जमीन है और उस पर कांट-कुश तथा पेड़-पौधे वेतरतीव ढंग से उगे हुए हैं। अगल-वगल ताड़-खजूर के पेड़ भी हैं। वहां से थोड़ी ही दूरी पर पुलिस चौकी है।

"मैं तो ताड़ी पिए बिना एक डेग भी आगे नहीं चल सकता।" ममदू वोलता है।

"बहुत थक गया हूं, ववुआ।" दुखित उत्तर देता है।

"चिन्ता न करो काका। मैं अभी ताड़ी उतारता हूं।" ममदू ताड़ी उतारने के लिए रात के अंधेरे में ताड़ चढ़ता जा रहा है।

वे रात भर ताड़ी पीते रहते हैं। दुखित तो पता नहीं नशे में क्या-क्या बकता जा रहा है। वे अपनी सारी थकान जैसे भूलते जा रहे हों।

मुचकुन बावू धरमपुरा के सबसे धनी-मानी और प्रतिष्ठित आदमी हैं। जमींदारी चली जाने के वावजूद उनके पास चार सौ एकड़ के लगभग जमीन थी। मुचकुन बावू को यह खबर लगी कि "आम वाग में कुछ मजदूर-परिवार आकर रुके हैं तो सुवह होते ही वे उनकी ओर लपके, जैसे इन्हीं की प्रतीक्षा में वे वर्षों से हों।

वड़ी-बड़ी और घनी मूंछों वाले मुचकुन बावू की वड़ी साधारण वेष-

भूषा है। खद्दर की धोती के ऊपर अकसरहां अधवांही गंजी डाले रहते हैं और कंधे पर उसी खादी में सफेद अंगोछा और पांव में साधारण पनही। इसी वेष-भाव में मुचकुन वावू दूर से वड़े भले और सुराजी किस्म के अक्खड़ आदमी लगते हैं। खाली उनकी छोटी-छोटी आंखों के भीतर नाचती हुई पुतलियां कभी-कभार वड़ी डरावनी लगती हैं और वहुत निकट होने पर कभी-कभी आदमी वेमतलव डर भी जा सकता है।

सुराज की लड़ाई के समय मुचकुन वावू की भूमिका अच्छी नहीं थी। इस वात का अहसास शुरू के दिनों में इन्हें भी था और गलत नहीं था। इन्हें क्या पता था कि जिसके राज्य में कभी सूरज भी नहीं डूवता उसके शक्तिशाली राजा की पराजय गांधी जी के सामने इतनी जल्द हो जाएगी ! आज ये जो कुछ भी हैं उन्हीं गौररंग महाप्रभुओं की कृपा ही से तो हैं। इस ईमानदारी को कौन माई का लाल इन्कार कर सकता है ? कई युवकों का पता-ठिकाना इन्होंने ही तो टामियों को दिया था। मगर यहां इनके पिछले और मरे हुए इतिहास को माटी से उखाड़ने की जरूरत नहीं है। मुचकुन वावू को इसकी हीन ग्रंथि वहुत ही कम दिनों तक थी। अव तो इसके लिए इन्हें न कोई मलाल रह गया है न पछतावा ही। ईमानदारीपूर्वक मिलान करते हैं तो आज के सुराजियों और इनमें कोई वुनियादी फर्क ही नहीं रह जाता। संतोष की सांस लेते हुए घनीभूत मूंछों के भीतर ही भीतर मुस्कराते हैं, सुराज की लड़ाई में मेरी कोई हिस्सेदारी नहीं भी है तो मैं इस पिछड़ेपन से वहुत छोटा नहीं रह गया हूं। वल्कि मान-मर्यादा, धन-दौलत, रहन-सहन, रोव-दाव, किसी भी वात में मुचकुन वावू किसी सुराजी से कम नहीं हैं। कहने का मतलव यही है कि आज भी मुचकुन वावू जो चाहते हैं वही होता है। इनके लिए अंगरेजी राज और अपने सुराज में फर्क ही कहां रह गया है। आज भी कौन इंकार कर सकता है कि मुचकुन वावू असली सुराजी नहीं हैं ?

घनी-घनी मूंछों के अन्दर से मुसकराते हुए मुचकुन वावू को अपने दो-चार कारिन्दों के साथ सामने खड़ा देखकर गंगा के किनारे से रोजी की

तलाश में आए हुए मजदूर बेतरह डर जाते हैं। वे भयभीत, कांपते हुए उनके और लाठीधारी कारिन्दों से थोड़ी दूर पर सभी के सभी, औरत-मर्द से लेकर बच्चे तक हाथ जोड़े खड़े हो जाते हैं, जैसे 'आम बाग' की ताड़ी उतार कर पी जाने का सारा कसूर स्वीकार करने के लिए तैयार हों। बेचारों को शंका हो रही है कि ये लोग इन्हें खदेड़ने के लिए आए हैं और वे मन-ही-मन यहां से दूर भाग जाने के लिए तैयारी भी कर रहे हैं।

"हम अभी अपना लत्ता-पत्ता उठाकर यहां से भागते हैं, सरकार। कसूर के लिए माफी दी जाए !" दुखित भरी आंखों और भर्राए गले से हाथ जोड़े मुचकुन बाबू की ओर बढ़ते हुए कहता है।

"क्या बात है ?" मुचकुन बाबू पूछते हैं।

"रात हम लोग इतना थक गए थे कि ख्याल ही नहीं रहा कि अपने बाप का समझकर ताड़ पर चढ़ते जा रहे हैं। ताड़ी के लिए माफ कर दीजिए मालिक।"

मुचकुन बाबू जोर-जोर से हंसते हैं। सब के सब निरे बुद्धू और गंवार हैं। दुनिया इतनी तेजी से बदल रही है, लगता है किसी भी बदलाव का इन पर कोई प्रभाव नहीं है। ये जहां थे, बल्कि वहां से भी सौ-पचास कदम पीछे हैं।

"कहां से आ रहे हो तुम लोग ?" मुचकुन बाबू असली बात पर आना चाहते हैं।

"गंगा के किनारे से, सरकार !"

"कहां जाओगे तुम लोग।"

"हमें नहीं मालूम, सरकार !"

"क्यों जा रहे हो ?"

"काम की तलाश में माय-बाप।" अपने दोनों हाथों को दुखित और भी कसकर जोड़ लेता है। "गंगिया माई सब कुछ बहाकर ले गई हैं। केवल गांव ही टीले की तरह रह गया है। खाने के लिए कुछ भी नहीं रह गया तो आप जैसे मालिकों की शरण में चल पड़े हैं। धान की कटनी में जो

ही एकाध मन अन्न मिल जाए।"

मुचकुन बाबू की नन्हीं आंखें अचानक घड़ियाल की तरह पानीदार नजर आने लगती हैं। वे पूछते हैं, "इस जाड़ा-पाला में खुले आकाश के नीचे कैसे रहोगे ?"

"कटनी में मजूरी के साथ में धान के संग पुआल भी तो हो जाता है, सरकार !" इस बार दाऊद मियां को भी बोलने की हिम्मत हो गई है। "पुआल मिल जाय तो हम जाड़े के बाप को भी कांख के नीचे दबाकर सो जाते हैं।"

"और कौन-कौन-सा काम कर सकते हो तुम लोग ?"

"सभी काम मालिक !" एक साथ कई कंठ फूट पड़ते हैं, जैसे बरखा की पहली फुहार मुर्झाए और सूखते पौधों पर पड़ी हो। दुखित फिर आगे बढ़कर कहता है, "मालिक ! शरीर से जो भी काम हो सकता है, हम इस पेट के लिए करते हैं। ये दोनों हाथ बड़े ईमानदार और मजबूत हैं, मालिक।"

मुचकुन बाबू बहुत धीरे से हंसते हैं। "यह तुमने ठीक कहा है। तुम लोग हाथों के राजा हो। जिन दो हाथ वालों के पास ईमान है वह कभी भूखों नहीं मर सकता।"

ममदू गोलाकार झुंड से बाहर निकलकर कहता है, "यही हाथ धान काटते हैं, पेड़ उगाते हैं, मिट्टी कोड़ते हैं, कुदाल और हल चलाते हैं। मालिक, इसीलिए यही हाथ धान और पेड़ को अच्छी तरह काटना भी जानते हैं।"

"कौन जाति हो तुम लोग ?"

"हरिजन और जुलाहे, सरकार।" ममदू कुछ बोला इसके पहले ही दुखित जवाब दे देता है।

"तुम लोग कितने हो ?"

"और तो सभी इधर-उधर छूटते चले गए हैं। मगर अपने गांव के हम ही दस-पन्द्रह घर रह गए हैं।"

एक कारिन्दा अपने कंधे से अंगोछा उतारकर वहीं पसारता है और मुचकुन बाबू वहीं पालथी लगाकर बैठ जाते हैं।

"इनके लिए जो भी फैसला करना है, अभी तत्काल कर ही देना अच्छा है, मालिक।" वह कारिन्दा बोलता है।

"यही तब से माथे में तजबीज कर रहा हूं, गुपुत।"

"क्या, मालिक।"

"यही कि हम इनके भविष्य के लिए क्या कर सकते हैं।"

"बेचारे दैवी प्रकोप के शिकार हैं।"

वे सभी इनकी बात-चीत के दरम्यान फिर परस्पर सिकुड़ते जा रहे हैं। कहीं ये अचानक न कहने वाले हों—"तुम लोग जल्दी यहां से भाग जाओ!" अब तो सभी एकदम चूर-चूर हैं। उन्हें कोई मारने-पीटने लगे तब भी वे कुछ भी नहीं कर सकते हैं। हिम्मत, चेतना सारी की सारी तो चूसी हुई है, मेहिया बैल की तरह वे भी विवश हैं—कर ही क्या सकते हैं।"

"अपने ही पास इतनी धनखेती है कि इनके अलावा और भी मजूर हमें कटनी के लिए बुलाने पड़ सकते हैं।" दूसरा कारिन्दा बोलता है।

"क्या चाहते हो तुम लोग?" उन मजूरों से पूछते हैं, मुचकुन बाबू।

"शरण में रख लीजिए, माय-बाप। और हम क्या चाहते हैं!"

"एक-दो शर्त है, मान लोगे सब लोग?"

"जो भी कहेंगे सब कबूल है, मालिक!" दोबारा सारे कंठ एक साथ बज उठते हैं।

मुचकुन बाबू तत्काल निर्णायक की मुद्रा में आ जाते हैं और एक को निकट सटाकर कुछ फुसफुसाते हुए यह वाक्य जोर से दुहराते हैं, "जा सरपट दौड़कर गुपुत। इनकी तकलीफ का इलाज जल्द होना चाहिए।"

थोड़ी देर के लिए इधर-उधर की बातें चलाकर ये उनके बीच घुल-मिल जाने का बढ़िया स्वांग रच लेते हैं।

"तुम लोगों के लिए यह जमीन लिख देता हूं।"

"यह क्या कह रहे हैं, मालिक !" दुखित आसमान से गिरता है।

"तव और क्या ? इस असार संसार में रखा ही क्या है।" दुखित कुछ भी समझ नहीं पा रहा है। खालीमुंह बाये मुचकुन बाबू को सुन रहा है। "जव तक इस जमीन पर चाहो रह सकते हो, झोपड़ी वना सकते हो, खेत वना सकते हो। तुम्हारी मर्जी। बाढ़-पीड़ितों की सहायता हमारा भी तो धर्म है।"

"सचमुच आप देवता हैं।"

"जव तक यह सृष्टि कायम रहेगी तब तक देवता और राक्षस का भेद वरावर बना रहेगा।" मुचकुन बाबू को इसी के दौरान एक वात का और ध्यान हो आता है। "तुम्हारे बीच बूढ़े कितने हैं ?"

"मुझे और दाऊद को छोड़कर सभी तो जवान ही हैं। यहां तक कि हमारी लड़कियां भी एकदम पट्ठा हैं जो चार-चार जन के बरावर अकेली खटती हैं।"

"तुम भी कहां बूढ़े हो ? पचास के लगभग उमिर होगी। और क्या ?"

"ठीक ही वता दिया, सरकार।" दुखित हिसाव वटोरकर कहता है, "ईमान से मालिक ! एक दिन में अकेले एक वीघा खेत काटकर गिरा देता हूं। हमारे हाथों में मशीनों जैसी फुर्ती है। एक वार हंसुआ हाथ में उठा लिया तो फिर क्या मजाल जो विना कटनी पूरा किए हंसुआ जमीन पर रख दें।"

"हाथ कंगन को आरसी क्या !" मुचकुन बाबू मूंछों के अन्दर ही हंसते हैं। "वस, कल ही से तुम्हारा इम्तहान शुरू हो जाता है।"

"इम्तहान क्या होता है, मालिक ?" दुखित को भय हो जाता है।

"नाम क्या है तुम्हारा ?"

"दुखित रैदास।"

"कितने सवांग आये हो ?"

"मैं, एक जनाना है। और एक वेटी है, अगिनिया। वस वहां देखिए खड़ी है।"

"वह ममद्दू है, सरकार।" दुखित स्वतः ही कहता जा रहा है, "बड़ा बहादुर लड़का है, एकदम दिलेर। कवि भी है। खुद गाना लिखता है।"

मुचकुन बाबू उसकी ओर उलटकर ताकते हैं। हृष्ट-पुष्ट और सांढ़ की तरह चौड़ी छाती वाला गोरा-चिट्टा ममद्दू अपनी आंखें इनकी घड़ियाली आंखों में डालकर दोनों हाथ जोड़ लेता है।

"इन कालों के झुंड में यह गोरा कैसे पैदा हो गया। जुलाहा-धुनिया तो ऐसा कभी नहीं देखा?" मुचकुन बाबू उसे नफरत से घूरते हैं।

"उस परमात्मा की कृपा, सरकार।"

मुचकुन बाबू भीतर-भीतर गलियाते भी हैं, स्साले आत्मा-परमात्मा की भी बात करते हैं।

कारिन्दा आते ही रूल की तरह मुड़े हुए कागज उनकी ओर बढ़ाता है। मुचकुन बाबू खुशी और उपलब्धि के कारण मुसकराते हैं। "अब काम की बातें सुनो। तुम लोग जिसका भी नाम चाहो उसके नाम पर गांव बसा लो और ठाट से हमारी शरण में जिन्दा रहो। इसके एवज में हमें मामूली चीजें तुममें से चाहिए। तुममें से हरएक के अंगूठे का निशान और दूसरी बात है, आधे लोग यहां रह जाओ और आधे के लिए गांव की दूसरी ओर इंतजाम कर देता हूं।"

दुखित हाथ जोड़े ही इनके पांव के तले बैठ जाता है। "हम सभी एक ही जगह के हैं, मालिक। हमें अलग-अलग मत रखिए!"

"तुम्हारे ही भले के लिए कह रहा हूं, दुखित राम।" मुचकुन बाबू समझाते हैं। "जितने ही लोग एक साथ रहोगे उतने ही आपस में लड़ते-झगड़ते रहोगे। वह देखो, सामने वाला बगीचा। मेरा ही है। तुम लोग तो बराबर आपस में मिलते रहोगे। यह कागज है।"

मुचकुन बाबू ने उनके सामने टिकट लगा कागज पसार दिया है।

"इस पर क्या करना है मालिक।"

"कुछ नहीं। मेरा यह आदमी एक-एक के अंगूठे का निशान लेता जाएगा और नाम भर चढ़ाता जाएगा।"

आध घंटे के भीतर ही सवों ने बैलों की तरह गर्दन झुकाए अपने अपने अंगूठे सौंप दिए हैं—औरत से लेकर बच्चे तक सभी।

"अच्छा, अब चलता हूं दुखित राम।" मुचकुन बाबू डेग बढ़ाते हैं, "आधे लोग खुद बंटकर वहां चले जाओ। मिल-जुलकर इस जमीन को लायक बनाना तुम्हारा काम रह गया है।"

मुचकुन बाबू कारिन्दों के साथ चल देते हैं।

"सादे कागज पर इन्होंने हमारे निशान क्यों लिए हैं?" ममदू सवाल पूछता है।

"विश्वास के लिए, और क्या?" दुखित ज्ञानी की तरह उसे बताता है, जिसने हमें बसाया है वह इतना भी नहीं कर सकता है?"

"तब क्या हम अपना गांव छोड़कर यहां बसने के लिए आए हैं?"

"नहीं रे, कुछ अनाज-पानी यहां से कमाकर एकाध महीने में चल देंगे।"

"अगर इन्होंने नहीं जाने दिया तब?"

"क्यों नहीं जाने देंगे? जो आदमी हमें बसाने के लिए जगह दे सकता है, अपने यहां काम दे सकता है वह हमें अपनी जन्मभूमि नहीं लौटने देगा?"

ममदू चुप लगा जाता है।

एक तरफ बस जाने की खुशी है तो दूसरी तरफ बंट जाने की तकलीफ भी है। कई दिनों से वे आपस में फैसला नहीं कर पा रहे हैं। अलगाव के नाम पर सभी अभी तक कांप रहे हैं।

"निराश होकर रोने की जरूरत नहीं है।" ममदू उन्हें समझाता है, "तुम लोग एक-एक कर जोड़ो कुल मिलाकर हमारे कितने हाथ होते हैं। यही हाथ मजूर हैं, हमारे मालिक भी। जिन हाथों से हम पौधे लगाते हैं उन्हीं हाथों से पेड़ काटेंगे। जिन हाथों से हम बीज बोने के [illegible] धरती चीरते हैं उन्हीं हाथों से हम धरती की ऊबड़-खाबड़ ज[illegible] बराबर बनाएंगे।"

"वह ममदू है, सरकार।" दुखित स्वतः ही कहता जा रहा है, "बड़ा बहादुर लड़का है, एकदम दिलेर। कवि भी है। खुद गाना लिखता है।"

मुचकुन बाबू उसकी ओर उलटकर ताकते हैं। हृष्ट-पुष्ट और सांढ़ की तरह चौड़ी छाती वाला गोरा-चिट्टा ममदू अपनी आंखें इनकी घड़ियाली आंखों में डालकर दोनों हाथ जोड़ लेता है।

"इन कालों के झुंड में यह गोरा कैसे पैदा हो गया। जुलाहा-धुनिया तो ऐसा कभी नहीं देखा?" मुचकुन बाबू उसे नफरत से घूरते हैं।

"उस परमात्मा की कृपा, सरकार।"

मुचकुन बाबू भीतर-भीतर गलियाते भी हैं, ससाले आत्मा-परमात्मा की भी बात करते हैं।

कारिन्दा आते ही रूल की तरह मुड़े हुए कागज उनकी ओर बढ़ाता है। मुचकुन बाबू खुशी और उपलब्धि के कारण मुसकराते हैं। "अब काम की बातें सुनो। तुम लोग जिसका भी नाम चाहो उसके नाम पर गांव बसा लो और ठाट से हमारी शरण में जिन्दा रहो। इसके एवज में हमें मामूली चीजें तुममें से चाहिए। तुममें से हरएक के अंगूठे का निशान और दूसरी बात है, आधे लोग यहां रह जाओ और आधे के लिए गांव की दूसरी ओर इंतजाम कर देता हूं।"

दुखित हाथ जोड़े ही इनके पांव के तले बैठ जाता है। "हम सभी एक ही जगह के हैं, मालिक। हमें अलग-अलग मत रखिए!"

"तुम्हारे ही भले के लिए कह रहा हूं, दुखित राम।" मुचकुन बाबू समझाते हैं। "जितने ही लोग एक साथ रहोगे उतने ही आपस में लड़ते-झगड़ते रहोगे। वह देखो, सामने वाला बगीचा। मेरा ही है। तुम लोग तो बराबर आपस में मिलते रहोगे। यह कागज है।"

मुचकुन बाबू ने उनके सामने टिकट लगा कागज पसार दिया है।

"इस पर क्या करना है मालिक।"

"कुछ नहीं। मेरा यह आदमी एक-एक के अंगूठे का निशान लेता जाएगा और नाम भर चढ़ाता जाएगा।"

आध घंटे के भीतर ही सबों ने बैलों की तरह गर्दन झुकाए अपने अपने अंगूठे सौंप दिए हैं—औरत से लेकर बच्चे तक सभी।

"अच्छा, अब चलता हूं दुखित राम।" मुचकुन बाबू डेग बढ़ाते हैं, "आधे लोग खुद बंटकर वहां चले जाओ। मिल-जुलकर इस जमीन को लायक बनाना तुम्हारा काम रह गया है।"

मुचकुन बाबू कारिन्दों के साथ चल देते हैं।

"सादे कागज पर इन्होंने हमारे निशान क्यों लिए हैं?" ममदू सवाल पूछता है।

"विश्वास के लिए, और क्या?" दुखित ज्ञानी की तरह उसे बताता है, जिसने हमें बसाया है वह इतना भी नहीं कर सकता है?"

"तब क्या हम अपना गांव छोड़कर यहां बसने के लिए आए हैं?"

"नहीं रे, कुछ अनाज-पानी यहां से कमाकर एकाध महीने में चल देंगे।"

"अगर इन्होंने नहीं जाने दिया तब?"

"क्यों नहीं जाने देंगे? जो आदमी हमें बसाने के लिए जगह दे सकता है, अपने यहां काम दे सकता है वह हमें अपनी जन्मभूमि नहीं लौटने देगा?"

ममदू चुप लगा जाता है।

एक तरफ बस जाने की खुशी है तो दूसरी तरफ बंट जाने की तकलीफ भी है। कई दिनों से वे आपस में फैसला नहीं कर पा रहे हैं। अलगाव के नाम पर सभी अभी तक कांप रहे हैं।

"निराश होकर रोने की जरूरत नहीं है।" ममदू उन्हें समझाता है, "तुम लोग एक-एक कर जोड़ो कुल मिलाकर हमारे कितने हाथ होते हैं। यही हाथ मजूर हैं, हमारे मालिक भी। जिन हाथों से हम पौधे लगाते हैं उन्हीं हाथों से पेड़ काटेंगे। जिन हाथों से हम बीज बोने के लिए धरती चीरते हैं उन्हीं हाथों से हम धरती की ऊबड़-खाबड़ जमीन को चौरस बनाएंगे।"

जमीन को साफ-सुथरा और चौरस वनाने में एक सप्ताह से अधिक दिन नहीं लगे हैं। मगर जिस दिन वे झोपड़ी उठाने के लिए वांस-वल्ला और खर-पात जुगाने में लगे थे उसी दिन मुचकुन वावू का कारिन्दा दोनों तरफ बसने वालों का नाम पढ़कर सुना गया था।

हालांकि वे सभी एक ही साथ काम करेंगे और रात के वक्त भी एक-दूसरे के साथ घुल-मिल कर वातें कर सकते हैं तव भी वे अलग होते समय विलख-विलखकर रो रहे हैं।

धरमपुरा में रहते लगभग एक माह से ऊपर हो रहे हैं।

मुचकुन वावू की कटनी समाप्त हो चुकी है। ओढ़ना-विछावन की कमी के कारण भी वे माघ-पूस के जाड़े को सहन नहीं कर पा रहे हैं। सभी गांव लौटना चाह रहे हैं। मगर सभी डरते हैं। कभी मुचकुन वावू कह रहे थे, वे अपनी मर्जी से भले आए हों, लेकिन हमारी मर्जी के वगैर यहां से नहीं लौट सकता। जिस दिन हमने उन्हें वसने के लिए जगह दी उस दिन गांव के लोग कहां थे? वे जव तक इस वंजर धरती को ऊपज के लायक नहीं वना देते तव तक उन्हें धरमपुरा छोड़ने की इजाजत नहीं है।

सवकी ओर से दुखित मुचकुन वावू के दुआर पर गया था। उस समय मुचकुन वावू ड्योढ़ी के अन्दर दारू पी रहे थे।

"मालिक, अव आज्ञा मिल जाती।" इन्होंने दुखित को अन्दर ही वुला लिया था।

"और अंगूठे का निशान?"

"वापस कर दीजिए, माय-वाप।"

वे दारू में जोर-जोर से हंसते हैं। "पहले जमीन कोड़ दो, फिर सोचेंगे।"

वह मुंह लटकाए निकल ही रहा था कि मालकिन की नजर मिल जाती है। वे दुखित को इशारे से बुलाती हैं। "चिन्ता मत करो, मैं तुम्हें कागज वापस कर दूंगी।"

"सच, मालकिन!" दुखित को विश्वास नहीं हो रहा है।

"तुम लोगों से कम जुलुम मैं थोड़े वर्दाश्त करती हूं।" वे निर्लज्ज की तरह पीठ की ओर का वटन खोल देती हैं, "यह देख रहे हो दाग!"

"वाप रे!" दुखित को अगिनिया की पीठ याद आती है। जमुना सिंह की छड़ी के निशान!

"गरीब और औरत पर ये इसी तरह जुलुम करते हैं।"

"मालकिन, आप···"

"मैं उनकी व्याहता हूं।"

"और···!"

"यह मेरा लड़का नहीं है। इसे तो कहीं से ले आए हैं।"

"सचमुच, मालकिन!"

"तव और क्या!" वह निर्भीक कहती जा रही है, "इन्हें औलाद कहां होती है। ये खाली दूसरों की वहू-वेटी के साथ एय्याशी कर सकते हैं। ये भी तो कहीं से लाए हुए हैं। उनके वाप को भी इनके दादा ने कहीं से गोद लिया था। ऐसे परिवारों की यही कहानी है।"

मालकिन की आंखें छलछला जाती हैं।

"चलता हूं, मालिकन। मालिक देख लेंगे।"

"मैं तुम्हारे अंगूठे का निशान खोजकर रखूंगी। ये हर वार मजूर-परिवारों के साथ ऐसा ही करते हैं।"

"आप देवी हैं, मालकिन।"

वे हंसती हैं। "नहीं, भइया। जैसा सोचते हो, वैसी वात नहीं है।"

वे रात-दिन एक कर जमीन की तैयारी में जुटते हैं। उन्हें समझ में नहीं आता वे कैसे जाल में फंस गए हैं। लगभग दस दिनों में रात-दिन कुदाल चलाने के वाद प्रथम वोवाई के लायक जमीन तैयार हुई है।

मगर उसमें तेलहन के बीज बो देने के बाद भी मुचकुन बाबू कहां संतुष्ट हैं । वे अभी भी मुक्ति देने के लिए तैयार नहीं हैं ।

"अब तो एक ही उपाय रह गया है, काका ।" ममदू कुदाल फेंकते हुए कहता है । "हम कबूतरों की तरह जाल लेकर उड़ चलें ।"

"क्या मतलब ?"

"एक रात को हम सभी चुपके से उड़ क्यों नहीं जाते ?"

"तुम नहीं जानते," दुखित कहता है, "मुचकुन बाबू बहुत बड़े आदमी हैं । एक दिन कह रहे थे उनके साले, दामाद, रिश्तेदार सभी पुलिस में हैं । वे हमारे गांव से भी हमें पकड़वाकर मंगवा लेंगे ।"

ममदू उसकी अबोधता पर हंसता है । "अरे उन्हें औलाद कहां है ?"

"ऐसे लोगों की औलाद का साधारण लोगों को पता नहीं रहता उसी दिन मुझे मालकिन बता रही थीं ।"

वे मन ही मन जाने की तैयारी में लगे हैं । मगर इसी बीच एक बहुत बुरी घटना हो गई है । रात ही से नूरी नहीं है । कुछ लोग भाले-गड़ांसे के साथ आए थे । नूरी की एक ही आवाज तो सभी सुन सके थे—"बाबा !" दाऊद चिल्लाते हुए दौड़ा था । मगर वे नूरी को लेकर पता नहीं अंधेरे में कहां गायब हो गए थे । मुचकुन बाबू उल्टा हरजाना ठोंक रहे हैं कि मेरी एक मजदूरिन घट गई है । उसका बदला कौन चुकाएगा ! दाऊद मियां इसका जल्द जवाब दें । बेचारा दाऊद तो बेटी को लेकर अलग परेशान है । जगेसर और ममदू भीतर-भीतर खौल रहे हैं । दुखित दाऊद को समझाता है, "रो मत, दाऊद । ये लोग खाली दाग कर छोड़ देते हैं ।"

"क्या बकते हो, दुखित भइया ?"

"गलत नहीं बोल रहा हूं । मैंने मालकिन की पीठ भी देखी है ।"

"अब मेरी नूरिया नहीं मिल सकती !" वह फूट-फूटकर रोता है ।

"तुमने देखा नहीं, मेरी अगिनिया की पीठ पर भी जमुना सिंह का दाग है ।"

"मगर मेरी नूरिया की गलती क्या है ?"

"मेरी अगिनिया या मालकिन की ही गलती क्या है ?"

सभी यहां से जल्दी भागने के पक्ष में हैं। मगर ममदू और जगेसर नूरी के बिना यहां से लौटने के लिए तैयार नहीं है उनका कहना हैं कि नूरी यहीं है और इसी गांव में है। जो हमारा रक्षक है वही भक्षक भी है। कहीं मालूम हो गया तो मुचकुन बाबू की जान ले लेंगे। लेकिन जगेसर और ममदू का सारा प्रयास वेकार था। कितनी लड़कियां ड्योढ़ी के अन्दर जाने के बाद फिर कभी बाहर नहीं आई हैं। दीवारों के अलावे किसी को भी उसका अता-पता नहीं रहता। मगर भय ऐसी चीज है कि दीवारें भी अपनी जवान बन्द कर लेती हैं। नूरी के साथ भी यही स्थिति हो सकती है।

दाऊद और दुखित बार-बार दौड़कर मुचकुन बाबू के नजदीक आते हैं। मगर वे मुचकुन बाबू के अहसास से ही डरकर लौट जाते हैं।

फागुन का पहला पक्ष शुरू हो गया है। मुचकुन वावू बराबर उनसे कुछ न कुछ काम लेते रहते हैं और जब जी में आता है थोड़ा-बहुत अनाज उनके बीच बंटवा देते हैं। अब वे जाल में फंसे कबूतर की तरह बहुत ज्यादा छटपटाते हैं। मगर उपाय ही क्या था। इतना तो पता चल ही गया है कि नूरी इनकी हवेली के अन्दर ही है और उसे वापस पाना आसान बात नहीं है। दाऊद को यही सोच लेना चाहिए कि नूरी नाम की एक बेटी थी जो मर गई है। उन्होंने आपस में यही तय भी किया कि गांव लौटने पर यही कहेंगे कि हैजा होने के कारण एक ही दिन में नूरी संसार से विदा ले गयी है।

ममदू के लिए वहां एक पल के लिए भी टिकना मुश्किल लगता है। जब तब वेगार के लिए प्रतिकार के कारण मुचकुन वाबू उसे आंखों पर चढ़ाए हुए हैं। एक दिन मुचकुन बाबू उसे बुलाकर पूछते हैं, "बहुत ज्यादा ताकत हो गयी है क्या, ममदू मियां ?"

"क्या गलती हो गयी, मालिक !" ममदू हाथ जोड़े हुए है।

"वेगारी समझने की अक्ल हो गयी है ?"

"हमारे ही अंगूठे के निशान से हमें कब तक धमकाते रहेंगे ?"

मुचकुन वावू को स्वभावतः वात-वात पर गुस्सा चढ़ता है। ममदू तो औकात से ज्यादा वोल गया है। जवार-पथार में इक्के-दुक्के शायद ही हों जो आंख मिलाकर मुचकुन वावू से वात कर सका हो। ममदू तो मिशाल वनना चाहता है। उन्होंने छड़ी उठायी और दो वार सटाक्-सटाक् ममदू की पीठ खींच दी ।

ममदू वहां से अगिया वैताल की तरह भागता है और अपने लोगों के वीच अपनी पीठ का प्रदर्शन करता है। लोग तड़पकर रह जाते हैं। अगिन वांस की छड़ी काटकर आम के पेड़ को दर्जनों वार सटसटा चुकी। जैसे वह आम का पेड़ नहीं मुचकुन वावू हों। जुलम इसी तरह आदमी सर झुकाकर सहता रहे तो वाढ़ की तरह जुल्म भी आदमी को तवाही की ओर धकेलता चला जाता है। कोई-कोई दिन तो ऐसा भी आता है जव भूखा-प्यासा सारा दिन मुचकुन वावू का काम करना पड़ता है। कारिन्दे मुंह अंधेरे सुवह में लाठी-डंडे के साथ आते हैं और इस तरह हांकते हुए खेतों पर ले जाते हैं जैसे वे आदमी नहीं, ढोर हों। जव तक किरण डूव नहीं जाती, कारिन्दे चारो तरफ से उन्हें घेरकर खेत में खटवाटे रहते हैं और अंधेरा चढ़ते ही धीरे से हट जाते हैं । वेचारे थके-मांदे अपनी मांद की ओर भागते हैं।

ममदू की पीठ का घाव भरने में काफी दिन लगे हैं। तव भी वह काम पर जाता रहा है। परन्तु दाग उसकी पीठ पर जनम भर के लिए रह गया है।

"तुझे शरम नहीं आती, ममदू ?" अगिन उससे पूछती है।

"किस वात के लिए रे !"

"ले पकड़ इसे ?" अगिन वही वांस की छड़ी ममदू के हाथ में पकड़ा देती है। "नहीं तो चल हम सभी वनास नदी में डूवकर मर जाएं ।"

"इससे तो अच्छा था हम वहीं गंगा में डूवकर मर जाते। इतनी दूर आने की क्या जरूरत थी ?"

"तव तुम्हें शरम क्यों नहीं आती ?"

ममदू का ध्यान जैसे उसकी बात की ओर नहीं गया। "अजीब बात है, तुम्हारी पीठ पर निशान, मेरी पीठ पर निशान। मालकिन की पीठ पर निशान। पता नहीं, सैकड़ों, हजारों ऐसे निशान वाले मेरी ही तरह चुप क्यों हैं ?"

"तुम्हारी ही तरह उन्हें भी शरम नहीं आती है।"

अगिन की इस बात से ममदू की पीठ का दर्द जैसे अचानक बड़े जोर से उभर गया हो। "तब अगिन, इस छड़ी को साक्षी रखकर कसम खा कि हम ऐसे निशान वालों को मिलजुल इकट्ठा करेंगे।"

"मैं कसम खाती हूं, ममदू।"

उसने अपने तमाम लोगों को रात में इकट्ठा किया और कहा, "सभी लोग गांव की ओर तत्काल रवाना हो जाओ। मैं एक-दो रोज में तुम लोगों के पहुंचते-पहुंचते आ जाऊंगा।"

"तुम अकेला यहां क्या करोगे ?" दुखित पूछता है।

"मैं लौटकर बताऊंगा।"

"पुलिस को हमारे पीछे लगा दिया गया तब ?"

"यह सब करने में देर होगी। तुम लोग अभी यहां से बगैर कोई आवाज किए चलने की तैयारी कर दो।"

वे लोग चुपचाप उसी क्षण गांव की ओर चल देते हैं।

दूसरे दिन ममदू ठीक उसी वक्त मुचकुन बाबू की हवेली में पहुंच जाता है। चारों तरफ सन्नाटा है। कारिन्दे झपकियां ले रहे हैं। गांव की गलियां एकदम सन्नाटे में बदल गयी हैं। ममदू पिछवाड़े से ड्योढी के अन्दर चला आया है और वहां तक पहुंच गया है जहां मुचकुन बाबू सोते हैं। परन्तु मुचकुन बाबू सोये नहीं हैं, रजाई में दुबककर दारू पी रहे हैं। ममदू ने चारो तरफ से खिड़की-दरवाजे बंद कर दिए हैं। वह धीरे से उनके ऊपर से रजाई हटाता है और उसी बांस की छड़ी से सटाक-सटाक मारता है। मुचकुन बाबू वहीं लोटन कबूतर हो जाते हैं। ममदू उनकी छाती पर बैठ[illegible]ता है, "जोर से चिल्लाओ मत, मालिक। नहीं तो गला दबा दूंगा[illegible]

"क्या चाहते हो ?"

"अंगूठ का निशान ।"

"अभी लाकर देता हूं ।"

मुचकुन बाबू आलमारी खोलकर कागज निकालते हैं ।

"बाकी कागज कैसे हैं ?"

"वे तुम्हारे नहीं हैं ।"

"इससे क्या हुआ ?" ममदू उनके गले की ओर फिर हाथ बढ़ाता है, "हमारे अंगूठे के ही निशान नहीं, उन तमाम लोगों के अंगूठे के निशान मुझे चाहिएं जिन्हें आपने हमारी तरह कैद कर लिया है ।"

ममदू स्वयं हाथ बढ़ाकर सारे कागजात निकालता है और दियासलाई निकालकर सबों में आग लगा देता है ।

"नूरी कहां है ?"

"मुझे नहीं मालूम बेटे ।" मुचकुन का नशा एकदम उतर गया है और वे थर-थर कांप रहे हैं, भय और जाड़ा दोनों से ।

"अगर कोई तुम्हारी भी बेटी को इसी तरह उठाकर ले जाता तब ?"

"मैं सच कहता हूं, मेरा हाथ उसमें नहीं है । मगर पता लगा दूंगा ।" मुचकुन बाबू बिलखने लगते हैं ।

"मैं नूरी के लेने दोबारा आऊंगा, मालिक ! सलाम ।"

इसके पहले कि मुचकुन बाबू शोर मचाकर गांव-घर के लोगों को बुलाते, ममदू निकलकर भाग जाता है ।

पौ फटते ही गांव में बड़े जोर का हल्ला हो गया है कि अगिनिया ने जमुना सिंह को बांस के कईन से पटक-पटककर मारा है । दुखित के वंश में कैसी बेटी जन्मी है रे बाप । जमुनासिंह सारी चमटोली को भूनकर रख

देंगे। कपड़े की तरह मरद बदलती रहती है। उसे कोई लाज-शरम थोड़े है ? जगपत बाबा तो सुदर्शन चक्र की तरह सारे गांव में नाच रहे हैं। आग जगा दी अगिनिया ने और भय से पीला पड़ता जा रहा है सारा गांव। मगर जगेसर ही एक आदमी है जो सबके सामने कहता है कि अगिनिया ने जो कुछ भी किया है ठीक किया है। जमुना सिंह किसी की बेटी-बहिन को पहचानते नहीं थे। जब चाहा बेकसूर पीट दिया। अगिनिया को उन्होंने उस साल क्यों मारा था ? बकरी तनिक खेत में घुस गयी थी। बेचारी हांकने के लिए तो जा ही रही थी। परन्तु उन्हें कहां मोह-माया था ? पाठी को आरी पर पटककर मार डाला और अगिनिया को सटसटा दिया। उस दिन गांव का मुंह क्यों बंद था ? जमुना सिंह से किसीने जवाब-तलब भी किया ? अगिनिया ने बदला लेकर गरीब आदमी को बल दिया है। अपने तमाम भाइयों को रास्ता दिया है। अगिन सिरीटोला की ज्योति है।

"ममदुवा, जगेसर सबको 'गुण्डा एक्ट' में चलान कराने की जरूरत है।" जगपत पांडे घूम-घूमकर कहते चलते हैं।

"किसलिए, बाबा ?" जगेसर घेरकर पूछता है।

"तुम लोग गांव में बलवा कराते हो ?"

"हम अपमान सहते रहें तब तो दुनिया आपकी नजर में ठीक है। क्यों ?"

ऐसा कभी हुआ है कि तुम लोग जवाब देने लगो ?"

जगेसर हंसता है। "इसीलिए तो जगपत बाबा, हमारा कोई भी काम आपको बलवा लगता है। हम अन्याय का विरोध करें तो बलवा है ?"

जमुना सिंह दूसरे रूप में बदला लेने के गेहूंअन की तरह फुफकार रहे हैं। उस साल गोदाम की लूट भूल नहीं पाये हैं। मगर एक आशंका यह भी दिमाग में है कि मंहगी, अकाल, सुखाड़ और बाढ़ बढ़ेगी तो लूट भी बढ़ेगी। जगपत पांडे उन्हें उकसाकर पंचायत बुलाने की बात कह रहे हैं। ममदुवा, जगेसरा, जितना, अगिनियां गांव छोड़ दें तभी कल्याण है। नहीं तो बराबर लूट, बलवा का भय बना ही रहेगा। उन्हें समझकर गांव छोड़ने

के लिए राजी कर लिया जाय, नहीं तो गुण्डा एक्ट में चालान कराना ही पड़ेगा।

दुखित, दाऊद, सरीखन सब के सब डरे हुए हैं। फरीदा दी तो घर में रो रही है। ममदुवा के साथ अभी तक कुत्ते की तरह व्यवहार कर रहे थे। अब वे गांव छुड़वाने पर तुल गए हैं। जगपत बाबा कहते हैं, ममदुवा का नाम पुलिस में तभी से है जबसे जमुना सिंह का गोदाम लूटा गया है। पुलिस जब चाहे उठाकर ले जा सकती है। एक तरह से जिस दिन ममदू दक्खिन से कटनी के बाद लौटा है उसी दिन से बधार में छिपकर रहने लगा है। दिन भर गंगा-पार दियरा में घूमता-फिरता है। रात में कभी खाने के लिए आ जाता है। नहीं तो बगीचे में सो रहता है। ममदू बड़ा हैरान है, आखिर इस तरह जिन्दगी कब तक चलती रहेगी।

"करमकांडी आदमी की यह हालत। पांडे बाबा तो लुकाठी लेकर गांव-गांव घूम रहे हैं। हमने उनका क्या बिगाड़ा है।" दुखित घबड़ाकर पूछता है।

"हमसे धरम को खतरा है।" सरीखन कहता है।

"एकदम गलत बात है।" जगेसर रोष में बोलता है, "पांडे जी तो ढोंगी हैं। अगिनिया का दूसरा ब्याह हुआ तो गलत हो गया। तब पांडे जी ने दो बेटे और एक बेटी के रहते दूसरी शादी क्यों की ?"

सरीखन सह पाकर कहता है, "सुन जगेसर। जब जगपत पांडे की बात निकली है तो पूरी कथा बतलाता हूं। पांडे जी ने जिससे अपनी शादी की है उसके सगे भाई से अपनी बेटी ब्याही है। एक ही आदमी साला भी है, दामाद भी। हमारी बेटी अगिनिया कैसे गांव की नाक काट रही है ?"

"अगिनिया को कहां खदेड़ दूं ? आखिर बेटी है न !" दुखित ज्यादा घबड़ाया हुआ है।

"यह विपत अकेले दुखित चाचा की नहीं है।"

"ठीक बात है, जगेसर।" सरीखन बार-बार कुछ बोलने के लिए उक-ताता रहता है। मगर दाऊद बराबर कहीं खोया रहता है। जब से नूरी के

साथ वटना हुई है तभी से दाऊद की वोली मर गयी है। हमेशा यही सोचता रहता है कि मर क्यों नहीं जाता। दाऊद एक तरह से मरा हुआ ही तो है। सिर्फ एक लाश रह गया है दाऊद। चेतना उसमें कहां है।

"यह विपत हमारी जमात पर आयी है।" दाऊद मियां के होंठ अचानक खुलते हैं। "अगिन विटिया वदचलन है तव मेरी नूरिया के साथ जालिमों ने ऐसा व्यवहार क्यों किया कि धरती से गायव कर दिया।"

"एक-एक कर हम सभी गायव कर दिए जाएंगे।"

"इसके वदले दूसरा उपाय क्या है?"

जगेसर समझाता है। "हमारे यही हाथ हैं न!"

"हैं तो क्या हो गया?"

"जव इन्हीं हाथों से खेत कोड़ते हैं, हल चलाते हैं, पेड़ और फसल उगाते हैं तो जुल्म के हाथ भी तोड़ सकते हैं।"

जगेसर को सभी आंखें फाड़कर ताकते हैं।

"मेरी समझ से पंचायत जरूर वैठेगी नहीं तो पुलिस आएगी।"

"पुलिस क्यों आएगी?"

"अगिनिया, जगेसर और ममदुवा के लिए। पांड़े जी उस दिन वोल नहीं रहे थे?"

"पहले पंचायत वैठेगी। अगर हम इसके वाद भी गांव से नहीं निकलते तभी पुलिस आएगी।" जगेसर पूरे आत्मविश्वास के साथ वोलता है।

"धरमपुरा के मुचकुन वावू के घर में डकैती का भी ममदू पर इल्जाम है।"

"यह तुम्हें कैसे मालूम, सरीखन?" दाऊद उलटकर देखता है।

"यही वात जगपत वावा ही किसी से कह रहे थे।"

"तव तो उनकी दुश्मनी ठानने की वहुत वड़ी योजना है।"

दरअसल उन लोगों का अनुमान था कि इस वार की वाढ़ से घवड़ाकर ये गांव लौटकर नहीं आएंगे। इनकी जगह-जमीन पर कई दर्जन आंखें गड़ी हुई थीं। इनके वापस आ जाने से उन आंखों में धूल पड़ गयी थी। फरीदा

के घर में तो ताला तोड़कर एक आदमी ने बैल-भैंस भी बांधना शुरू कर दिया था। जगपत पांडे की भविष्यवाणी पर सबकी आस्था जम गयी थी जैसे परमेश्वर-वाणी हो। फरीदा के घर से उस आदमी ने ममदू के भय से बैल-भैंस हटा लिया था। मगर सरीखन, दाऊद, गनेसी के साथ अभी तक घिच-पिच चल रहे थे। इनके घरों में अभी तक उनके सामान पड़े हैं। कहने पर कहते हैं कि हमारे बाप-दादों ने जब बसने की जमीन दी थी तब। जब हमारी इच्छा होती तब सामान उठा लेंगे।

ममदू इनके दो दिन बाद गांव आया तो रास्ते से ही गंगा-पार लौट गया था। एक दिन बाद वह अगिन से मिला था। अगिन उसे गांव में ही रहने पर बहुत जोर दे रही थी। मगर ममदू कुछ सोचकर तैयार नहीं हो रहा था। "वक्त बहुत बलवान होता है, अगिन।" ममदू ने उसे समझाया। "हम गांव छोड़कर कहां जाएंगे। सिरीटोला गनपतटोला हमारी जनम-भूमि है, अगिन। हम इसी भूमि पर जिएंगे और मरेंगे।"

"तब गांव काहे नहीं चलता रे?"

"नूरी को जिन्दा या मुर्दा पता लगाने एक बार फिर धरमपुरा जाऊंगा।"

"हम पर पंचायत बैठेगी, ममदू।"

"बैठने दे। हम ब्याह कर लेंगे। और इसी गांव में रहेंगे।"

"बाबू डरे हुए हैं और खौफ खाए हुए हैं कि गांव छोड़कर जाना पड़ेगा।"

शाम होती जा रही थी। "तू घर जा। कल हम फिर मिलेंगे। बल्कि इधर रोज-रोज मिलेंगे।"

अगिन बोली, "आजकल उनके लड़के छूरा-बन्दूक लेकर घूम रहे हैं। कहते हैं, एक-एक जन को खतम करेंगे। उस दिन मोती को जमुना सिंह के बेटे ने छूरे से मार दिया था। और कोई कुछ नहीं कर रहा है। कल रात मेरे घर में छूरा लेकर घुस गया था।"

"किसलिए?"

"मुझे मारने आया था।"

"तब ?"

"माई घर में थी। मैं दीवार लांघकर सोहराई मौसा के घर में चली गयी। हाथ में कुछ नहीं था। नहीं तो उस गुण्डे को अकेले देख लेती।"

"अब तो उन्हीं के सारे लड़के गुण्डे रह गए हैं जो खुलेआम छूरा-बन्दूक लेकर घूमते हैं और 'गुण्डा एक्ट' हमारे लिए इस्तेमाल कराया जाता है। हम इधर-उधर कब तक भटकते और भागते रहेंगे ?"

"चलूं, ममदू।" जैसे अगिन को अचानक ध्यान हो आया हो। "कहीं वे रास्ते में न छिपे हों।"

"हां रे। मुझे तो ध्यान ही नहीं था।" ममदू उसका हाथ पकड़कर उठाता है, "चल गांव से सटे तुझे छोड़ आता हूं।"

दोनों कुछ दूर तक साथ-साथ आए थे। अंधेरा अगल-बगल खेतों में फैलता जा रहा था। गेहूं-चने की कटनी हो जाने से सर्वत्र सन्नाटा लग रहा था। ठंडक भी कम नहीं सता रही थी। दिशा-फराकित के लिए जगपत पांडे खेत में बैठे थे। वे लोटा उठाकर चलने ही वाले थे कि उनकी नजर अगिन और ममदू पर पड़ गयी थी। मगर उन दोनों ने उन्हें एकदम नहीं देखा था। पांडे जी का माथा चकराया—बाप रे बाप ! दुखिता की छौड़ी गजब की वदचलन है। एक जगह तो इसका मन भर ही नहीं सकता। उधर वाबू जमुना सिंह पर अंधेरे में हमला कर दिया। इधर उनके लड़के को रात में अपने घर पर बुलाती भी है। एकदम छिनाल है। मुसलमान ममदुवा के गले में रात भर बांह डालकर गंगा के अरार पर पड़ी रहती है सो अलग। धर्म-जाति सब का सत्यानाश कर रही है। कुछ न कुछ उपाय तो करना पड़ेगा।

बर्दाशत नहीं हुआ तो आखिर टोक ही दिया, 'का रे अगिनिया कहां से आ रही है ?"

"ममुदवा से भेंट करने गयी थी, वावा।"

"इस रात को ?"

"गयी तो शाम को ही थी। मगर लौटते समय रात हो गयी?"

जगपत पांडे के मन में जो भी कल्पना या विश्वास है उसे वहां उगल कर ही क्या करते? उन्होंने बात बदल दी, "कल रात जमुना सिंह का लड़का तुम्हारे घर पर क्यों गया था?"

"मुझे मार डालने के लिए आए थे?"

पांडे जी हंसते हैं, बड़ी भयावह हंसी। "गांव में तो यही हल्ला है कि तुमने उसे बुलाया था।"

"मैं उस गुण्डे को क्या बुलाऊंगी?"

पांडे जी सहम गये थे। क्या ठिकाना, मुझ पर न हाथ छोड़ दे। फिर भी उन्होंने नहले पर दहला आखिरकार अपने स्वभाव के कारण मार ही दिया, "बिना बुलाए कोई किसी के दरवाजे पर क्यों जाएगा?"

अगिन उलटकर खड़ी हो गयी थी। क्रोध से उसका चेहरा तमतमा उठा था। 'हम गरीब हैं, बदचलन नहीं, पांडे बाबा। झूठ बोलने पर भी आपकी कंठी गले में अटकी कैसे रह गयी है? अपनी बेटी को सरहज बनाइये आप और गालियां मुझे दें?"

जगपत पांडे उखड़ गये और बेतहासा चिल्लाए थे, "दौड़ो! दौड़ो!! अगिनिया और ममदुवा मार रहे हैं?..."

जगपत पांडे जमीन पर लेट गए थे और लोट-लोटकर छटपटा रहे थे। उन्होंने ऐसा नाटक रचाया था जैसे उन पर बहुत अधिक मार पड़ी हो। अगल-बगल से काफी लोग इकट्ठे हो गये थे। जब लोगों ने उन्हें उठाकर बैठा दिया और पूछताछ करने लगे तो उन्होंने चुप्पी साध ली।

एक आदमी बोला, "जगपत बाबा को भूत ने उठाकर पटक दिया है। बेचारे की बोलती बंद हो गयी है।"

लोग किसी तरह उन्हें उठाकर गनपतटोला ले आए और एक खटोले पर सुलाकर जल्दी-जल्दी पंखा करने लगे। उनकी दूसरी पत्नी से एक ही लड़की थी जिसे बराबर अपने पास रखते थे। वह रोती हुई घर के अन्दर गयी। बेचारी पंडिताइन जो कभी चौखट से बाहर नहीं निकलती थीं वे

दौड़कर भीड़ की परवाह न करते हुए खटोले के पास चली आयीं और भोकार पारकर रोने लगीं। उन्होंने हाथ उठाकर पत्नी की ओर कुछ समझाने की कोशिश की, जैसे वे कह रहे हों कि मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। मगर पत्नी तो उसी तरह रोये जा रही थीं, मानो पांडे जी मर गये हों। रुलाई के ढंग पर अगल-बग़ल से औरतें भी दौड़कर चली आयीं और उनकी सहानुभूति में भी करीब बैठकर सिसकने लगीं। बेचारी एक बुढ़िया तो सबको धकियाती हुई आई और दालान पर ही थसक कर उनकी पत्नी के स्वर में स्वर मिलाकर राग अलापने लगी—अइसन जुवान मेहर छाड़ि के मरल हो बबुआ !—बबुआ हो, बबुआ !···

कुछ लोग बुढ़िया पर झुंझलाए, यह बुढ़िया सनकी तो नहीं है। पांडे जी मरे कहां हैं। डकर-डकर ताक रहे हैं। हाथ-पांव हिल ही रहे हैं। लगता है, भूत ने पांडे बाबा पर कसकर सवारी कर दी है। भूत जब तक सवार रहेगा, पांडे बाबा इसी तरह चुपचाप हाथ-पांव हिलाते रहेंगे।

अचानक जगपत पांडे खटोले पर उठकर बैठ गये थे। लोगों को विश्वास हो गया था पांडे बाबा होश में आ गए हैं। धीरे-धीरे सभी अपने-अपने घर लौट गये थे। पत्नी सिरहाने बैठी रह गयी थी। अचानक वे फिर उठकर बैठ गए थे और बोलने लगे थे, "मुझे भूत ने नहीं पटका था।"

"तब क्या हो गया था ?' पत्नी ने आंसू पोंछते हुए पूछा।

"मैं साधना कर रहा था ?"

"कैसी साधना ?"

"मैं देख रहा था कि कितने लोग मेरे साथ हैं।"

"इसका क्या मतलब हुआ ?"

"यह बहुत जरूरी था।"

पत्नी कुछ भी समझ नहीं पा रही थी—"आपको क्या हो गया था ?" पंडिताइन ने पूछा।

"वह अभी बताने की चीज नहीं है। गांव पर भारी आफत आने वाली है। यहां कुछ पापियों का वास हो गया है।"

"यह जानकारी कैसे हुई है ?" वे क्रोध में बिछावन से उठकर टहलने लगे थे। "मैं करमकांडी हूं, खिलवाड़ नहीं है। सबको मेरी आग में झुलसना पड़ेगा।"

उसी दिन से जगपत पांडे बहुत बेचैन रहने लगे हैं। उन्होंने गांव भर में यह खबर फैला दी है कि ममदू और अगिनिया को उन्होंने रंगे हाथ पकड़ लिया है। उनके जीते जी गांव में ऐसे कुकर्म नहीं हो सकते। पंचायत और पुलिस को कोई न कोई निर्णय तो लेना ही पड़ेगा।

अगिन को कुआं पर पानी भरते समय देखते ही गालियां शुरू कर दिया था। आखिर क्यों ? क्या उन्हें भरोसा था कि वे गांव लौटकर फिर कभी नहीं आएंगे ? वह अन्धेरे में जमुना सिंह का बंसवाड़ी तक पीछा करती हुई गयी और बांस का कईन तोड़कर सटसटा दिया था। वह बड़े जोर से घर की ओर भागी थी। अचरज की बात तो यही थी कि बाबू मन ही मन प्रसन्न भी थे। माई भले डर के मारे उल्टे अगिनिया को ही गलिया रही थी। मगर बदलती हुई सिरीटोला की परिस्थितियों ने दुखित का भी मन बदल दिया था। सभी पीछे में इस बदले के लिए दुखित से अगिनिया की सराहना कर रहे थे। दुखित तो यहां तक कहने लगा था, गांव की हर बेटी को अगिन बनने की जरूरत है। धरमपुरा में दुखित का मन अचानक बदल गया था। गरीब आदमी अगर इसी तरह कमजोर और काहिल बना रहा तो अंगूठा और इज्जत पता नहीं उन्हें कब तक सौंपना पड़ेगा। चलो, बेटी ने अपने बचपन का बदला तो ले लिया। बदला लेकर ही आदमी इस गांव में जिन्दा रह सकता है। उसने संकल्प कर लिया, यह जो अमीरटोली की पंचायत है, दुखित उसका डटकर मुकाबला करेगा।

आहिस्ते-आहिस्ते चमटोली को भी विश्वास हो गया है कि ममदू, अगिनिया और जगेसर को लेकर पंचायत जरूर होगी। जगपत बाबा ने जिस दिन मौन होने का नाटक कर सारे गांव को चौंका दिया था उसके ठीक पन्द्रहवें दिन जमुना सिंह के दुआर पर सिरीटोला और गनपतटोला की पंचायत बैठी। इसके पहले इतनी बड़ी पंचायत कभी नहीं बैठी थी। युवा

से लेकर बूढ़े तक सभी पंचायत में आये हैं। यहां तक कि जात-परजात की सभी औरतें भी बांसवाड़ी के पिछवाड़े पंचायत सुनने के लिए आयी हैं।

सभी को अगिनिया, ममदू और जगेसर का इंतजार है। सर्वत्र विचित्र तरह का सन्नाटा है। खाली बांसवाड़ी के पत्ते-टहनियां हवा में सरसराकर नीरवता को तोड़ती रहती हैं।

जगेसर और ममदू तो एक तरफ आकर खड़े हो गए हैं। फिर भी अगिनिया का इंतजार है। अचानक भनभनाहट शुरू हो जाती है। शायद दुखित इसका जवाब दे। दुखित हठात् हाथ जोड़कर खड़ा होते हुए बोलता है, "मेरी बेटी यहां तक नहीं आ सकती पंचो !"

"क्यों ?" जमुना सिंह की आवाज में गरमाहट है।

"बेटी—औरत कभी पंचायत के सामने आयी है जो मेरी बेटी को बुलाते हैं ? जो कुछ भी पूछा जाएगा मैं ही सबका जवाब दूंगा।"

थोड़ी देर तक फिर सन्नाटा छाया रहता है। मगर इस बार जगपत पांडे सन्नाटे को तोड़ते हैं, "पंचो ! जगेसर, ममदू और अगिनिया गुण्डा एक्ट में चलान हों इसके लिए गांव इन्हें दंडित करे। इनकी चरित्रहीनता सीमा पार कर चुकी है। हमारी बेटी-बहुएं इनके असर से थोड़े अलग रह पाएंगी। अगिनिया और ममदू के दो धर्म, दो जाति। परमात्मा करे, यह छूत की बीमारी हमारे गांव में नहीं फैले। दुखित अपनी बेटी को संभाल नहीं पा रहा है। जिस-तिस नौजवान को अपने घर में बुलाती रहती है। ममुदवा मियां के साथ खुलेआम रहती है। दाऊद की बेटी नूरिया दक्खिन में ही भाग गई है। जगेसर को धरम-करम का कोई ज्ञान नहीं है। यह भी बड़े-बूढ़ों को अनाप-शनाप बकता रहता है। धरमपुरा में मुचकुन बाबू के घर ममदू डकैती करके भागा है। ज़गेसर और ममदू जवार-पथार लूटने के लिए गिरोहबंदी कर रहे हैं। उस साल जमुना सिंह के गोदाम की लूट सभी भूले नहीं हैं। इसलिए हमारा अनुरोध है कि पंच इन तीनों को सभी के सामने पांच-पांच जूतियां लगाकर गांव से हमेशा के लिए निकाल दें।"

अचानक सौ से भी ज्यादा लोग जगपत पांडे के विरोध में खड़े हो जाते

हैं और चिल्लाने लगते हैं, "पंच की हिम्मत है कि इन तीनों पर हाथ उठा दें। हम लाठियों से उनके हाथ तोड़ डालेंगे।"

दुखित ने तो यह भी कहने की हिम्मत कर दी, "जिस साल जमुना सिंह की भतीजी शंकर हरवाह के साथ भाग गयी थी उस दिन पंच कहां थे। सोहराई भगत की वेटी को खुलेआम विसनपुर के वावू ने रख लिया तव भी इस गांव के पंच चुप थे। सुनलो पंचो। गरीव की न कोई जाति होती है, न धर्म। ममदू और अग्नि पति-पत्नी हैं। इन्हें गांव से कोई नहीं निकाल सकता। ये जव तक जिन्दा हैं इसी गांव में रहेंगे। आदमी मर जाता है मगर अपनी जन्मभूमि छोड़ कर कहीं नहीं जाता। मेरी अग्नि मंदिर की तरह पवित्र है। इस देवी के मन्दिर की रक्षा के लिए इसी गांव में रहेंगे।"

पंचायत में खाली सोहराई भगत उनके साथ वैठा रह गया है। वाकी सारे लोग एक साथ परिणाम भुगतने के संकल्प सहित पंचायत से उठते जा रहे हैं।